सरस्वती सिरीज़

अवध की बेगम

आठ दस आना

सरस्वती-सिरीज़ नं० ३५

अवध की बेगम

के० के० मुकर्जी

K. K. Mukerji

प्रकाशक
इंडियन प्रेस लिमिटेड
प्रयाग

सरस्वती-सिरीज़

आधुनिक उपन्यास (नाटक)

अवध की बेगम

बँगला के सुप्रसिद्ध नाट्यकार अपरेशचन्द्र मुखोपाध्याय के नाटक का अनुवाद

के० के० मुकर्जी

पात्र

पुरुष

शुजाउद्दौला—फ़ैज़ाबाद (अवध) के नवाब।

मीर क़ासिम—बङ्गाल के आख़िरी नवाब।

बहार और अज़ीमन—मीर क़ासिम के लड़के।

आसफ़उद्दौला
सआदत अली } —शुजाउद्दौला के लड़के।

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—रुहेला सर्दार।

दुन्दी ख़ाँ—हाफ़िज़ के भाई।

नियामत ख़ाँ
सफ़र जङ्ग } —रुहेला सर्दार।

फ़ैज़ुल्ला—रहमत के भाई का पोता।

मुर्तज़ा ख़ाँ
हैदर बेग } —शुजा के वज़ीर।

लताफ़त अली—शुजा का फ़ौजदार।

ग़फ़ूर अली—मीर क़ासिम का नौकर।

दुराब अली—ख़ोजाओं का सर्दार।

व्यास राय—रुहेलों का दीवान।

विट्ठलदास—राजपूत किसान।

लक्ष्मीप्रसाद—विट्ठल का लड़का।

सिपाही, पहरेदार, इत्यादि।

स्त्रियाँ

आमेतू या बहू बेगम	—अवध की बेगम।

गुलनार—मीर क़ासिम की बेगम।

हाफ़िज़ रहमत की बीबी।

जिन्नत उन्निसा—हाफ़िज़ साहब की पोती।

दुलारी (छाया)—विट्ठलदास की बेटी।

गुजारी—व्यास राय की स्त्री।

बाँदियाँ इत्यादि।

पहला अङ्क

पहला दृश्य

[समय—सबेरे १० बजे। दूर पर घना जङ्गल और धुएँ से ढके पहाड़। कुछ दूर पर पहाड़ से गिरता हुआ झरना। काफ़ी तेज़ धूप। जङ्गल की दाहिनी ओर से दो सिपाही आते हैं।]

पहला सिपाही—नहीं; आज की रुख़सत ही बदनसीबी की है। सुबह से इतना वक़्त गुज़र गया, यह जङ्गल, वह जङ्गल, सारे जङ्गलों की ख़ाक छान डाली; शेर, हिरन तो दूर रहा—एक ख़रगोश तक नज़र नहीं आया। ख़ाली हाथ लौटना तो नवाब बहादुर की आदत के ख़िलाफ़ है। पर आज शाम को ख़ाली हाथ न लौटना पड़े, तभी ख़ैरियत है।

दूसरा सिपाही—देख रहा हूँ, हर एक अमीर को एक न एक अजीब शौक़ ज़रूर रहता है। मज़े में नवाबी कर रहे हो,—करो न बाबा! जङ्गल-जङ्गल छानकर यह शिकार का बदशौक़! लाहौल विलाक़ुव्वत! इसका भी कोई मतलब है! एक दिन की भी फ़ुरसत नहीं। फ़ज़िर के चार बजे उठकर, जब तक शिकार न मिले—तब तक दौड़ो, हुज़ूर साहब के पीछे-पीछे। और तारीफ़ यह है कि पट्ठा थकता भी नहीं। शेर, नहीं तो हिरन—कुछ न कुछ चाहिए ज़रूर।

पहला सिपाही—हाँ, दिन भर जङ्गलों में शेर और हिरन और रात को हिरन जैसी आँखोंवाली शेरनी ! इसी को कहते हैं शिकारी नवाब !

दूसरा सिपाही—इसमें भी कोई शक है। लेकिन दिन के शिकार में जङ्गलों का भगावा देने के लिए हमारी ज़रूरत पड़ती है पर रात के शिकार में मच्छर भगाने को भी कोई नहीं बुलाता ; अफ़सोस !

पहला सिपाही—फ़ैज़ाबाद के नवाब के ख़ुर्द महल में मच्छर भगाने का काम तक़दीरवालों को ही मिलता है। पाँच सौ बेगमें—समझा ?

दूसरा सिपाही—बेगमें ? इन्हें तू बेगमें कहता है ? बेगम ! इतना अच्छा लफ्ज़ और उसकी यह बेइज़्ज़ती ! बोल बाँदियाँ ! बांदियाँ—समझा ! बाँदियाँ—!

पहला सिपाही—या ख़ुदा, कहीं एक रोज़ के लिए भी नवाबी मिल जाती !

(गाने के सुर में) "अल्लाह ने क़िस्मत में मेरे लिखके ग़रीबी—
फ़रमाया मिज़ाज इसका शाहाना बना दे !"

दूसरा सिपाही—अबे चुप, कहीं हुज़ूर आ गये तो—

पहला सिपाही—हुज़ूर !—वह देख दो हुज़ूर—

दूसरा सिपाही—अरे सच तो, कौन हैं ये ख़ूबसूरत लड़के ? इस जानवरों से भरे जङ्गल में कहाँ से आये ?

[बाँई तरफ़ से मैली पर क़ीमती पोशाक पहने हुए बहार (उम्र दस साल) और अज़ीमन (उम्र आठ साल) आते हैं। दोनों का चेहरा इतना मिलता-जुलता है कि हर कोई समझ सकता है कि ये दोनों भाई हैं। कड़ी धूप से दोनों का मुँह सूख गया है। आँखें कुछ डरी

हुई—अज़ीमन की बातों से ज्ञात होता है कि शायद अब रो देगा।]

अज़ीमन—हम कहाँ आ गये भाईजान,—हमारा ख़ीमा किस तरफ़ है ?

बहार—या अल्लाह, हम रास्ता भूल गये। वे दो सिपाही हमारी तरफ़ देख रहे हैं न ! चलो उनसे पूछें।

अज़ीमन—अबे ! बतला सकता है, हमारा ख़ीमा किस तरफ़ है ?

बहार—जङ्गल में हम रास्ता भूल गये हैं।

पहला सिपाही—कौन हो तुम ?

अज़ीमन—बदतमीज़, अदब से बात कर।

पहला सिपाही—कहाँ का आया है नवाब का पोता ! अदब से बात कर !

अज़ीमन—नवाब का साहबज़ादा ! जानता नहीं हमारे वालिद नवाब मीर क़ासिम हैं ! हम छोटे हैं इसलिए अब्बाजान तलवार नहीं पकड़ने देते, नहीं तो इसी वक्त तुझे ख़त्म कर देता, पाजी—बदतमीज़।

बहार—चुप रहो भाई मेरे (सिपाहियों से) तुम लोग कुछ ख़याल न करना। मेरा भाई बच्चा है। अगर जानते हो तो बतला दो हमारा ख़ीमा किस तरफ़ है। रास्ता भूलकर बहुत देर से हम इस जङ्गल में भटक रहे हैं।

पहला सिपाही—(दूसरे सिपाही से) यह लौंडा हमारी यह तौहनी करे—ख़त्म कर दो इन दोनों को आज। (तलवार निकालकर) यही दोनों आज के शिकार हैं।

(शुजाउद्दौला आते हैं)

शुजाउद्दौला—उन तलवारों को तुम्हें अपनी अपनी छातियों में भोंकना होगा—कायर !

[दोनों सिपाही अदब बजाकर पीछे हट जाते हैं। डर से दोनों का चेहरा सूख जाता है और दोनों एक साथ कहते हैं—"रहम नवाब बहादुर—रहम ! रहम !"]

शुजाउद्दौला—बच्चो, मैं आड़ से सब सुन रहा था। तुम्हारे वालिद साहब मेरी सरहद में आकर ठहरे हैं, यह उनकी नवाज़िश है। चलो ढूँढ़कर देखें, उनका ख़ीमा कहाँ है। वे भी ज़रूर तुम्हारे लिए हैरान होंगे।

बहार—आदाब ! आप नवाब हैं ?

अज़ीमन—क़िस्मत से आप आ गये, नहीं तो ये बदतमीज़ हमें मारने को तैयार थे। मेरे पास तलवार न थी, इसी लिए कुछ कह न सका। दीजिए तो अपनी तलवार, मैं ज़रा उसे अदब सिखाऊँ।

शुजाउद्दौला—मेरी तलवार तुमसे भी ऊँची है। पहले बड़े हो जाओ, फिर तलवार हाथ में लेना। यह तो तुम जैसे बहादुरों की ही चीज़ है।

अज़ीमन—आप भी वही कहते हैं। अब्बाजान भी यही कहकर मुझे तलवार नहीं देते। क्या आप दोनों ने एक साथ बैठकर कहीं सलाह की है ?

शुजाउद्दौला—(हँसकर) भोले बच्चे ! इस कायर को मैं ही सज़ा देता हूँ। जो सिपाही इस तरह से तलवार की तौहीन करता है उसके लिए मेरी पल्टन में जगह नहीं है। सूबेदार !

(सूबेदार आकर कोरनिश करता है।)

सूबेदार—मालिक !

शुजाउद्दौला—इन दोनों सिपाहियों को बरख़ास्त कर दो।

सूबेदार—जो हुक्म।

बहार—हुज़ूर! आप इनको बरख़ास्त कर रहे हैं। अब्बाजान कहा करते हैं—मुलाज़मत चली जाने पर लोगों को बड़ी तकलीफ़ होती है। आप इनको मुआफ़ कर दीजिए।

शुजाउद्दौला—मुआफ़ तो मैं नहीं कर सकता। क़सूरवार वह तुम्हारा है, तुम चाहो तो मुआफ़ कर सकते हो।

बहार—मैंने उन्हें मुआफ़ किया। (अज़ीमन को) भाई जान, ग़रीब सिपाहियों को मुआफ़ कर दो।

अज़ीमन—अच्छा, मैंने भी उन्हें मुआफ़ किया।

दोनों सिपाही—नवाबज़ादे सलामत।

[दोनों कोरनिश करते हुए जाते हैं।]

(मीर क़ासिम आते हैं।)

मीर क़ासिम—अरे, तुम लोग यहाँ हो! और मैं सुबह से तुम लोगों को ढूँढ़ रहा हूँ। और—और—आप—आप ही क्या!

बहार—अब्बाजान! हुज़ूर भी नवाब बहादुर हैं, कितने शरीफ़ हैं। क्यों हैं न अज़ीमन भाई!

अज़ीमन—हाँ हाँ, भाई-जान।

(शुजा और मीर क़ासिम एक दूसरे को बाक़ायदा सलाम करते हैं।)

शुजाउद्दौला—नवाब साहब, आपके साहबज़ादों से ही मुझे आपकी तारीफ़ मालूम हो गई है। आपकी मुसीबतों से मैं वाक़िफ़ हूँ—लेकिन यह कभी न सोचा था कि आज सुबह बंगाल की बदक़िस्मत मसनद

अवध के जंगल में अपना जौहर लेकर इस ग़रीब की मेहमान बनेगी। आपकी बड़ी नवाज़िश होगी, अगर मेरे ग़रीबखाने में तशरीफ़ ले चलने में कोई उज्र न करें।

मीर क़ासिम—मसनद से भी बेहतर—आपकी इस मेहरबानी को मैं अल्लाहताला की दुआ समझकर मंज़ूर करता हूँ।

शुजाउद्दौला—आपके और सब साथी कहाँ हैं ? मैं सबको लेकर...।

मीर क़ासिम—लेकिन नवाब साहब, उसके पहले मेरी एक अर्ज़......।

शुजाउद्दौला—ज़रूर फ़रमाइए।

मीर क़ासिम—सल्तनत, दौलत, मददगार सब कुछ खोकर, बेईमानों से धोखा उठाकर मैं बीवी, दो बच्चों और एक वफ़ादार नौकर के साथ, जंगलों में जानवरों की तरह मारा मारा फिर रहा हूँ। आप मुसलमान हैं; हमदीन हैं; अगर आप मुझे पनाह दें, अगर फ़ौज के साथ मेरी मदद करें, तो यक़ीन है अपनी खोई हुई सल्तनत मुझे फिर वापस मिल सकती है।

शुजाउद्दौला—इन्शा-अल्लाह, मुझसे जो कुछ ख़िदमत हो सकती है, मैं ज़रूर करूँगा।

मीर क़ासिम—तब आइए, आज इस जंगल को गवाह कर दोस्ती की पहचान के लिए, हम अपनी तलवारें बदलें।

शुजाउद्दौला—दुरुस्त है। (दोनों एक दूसरे से तलवार बदलते हैं) सूबेदार, शाही ख़ातिर के साथ अगवानी करने के लिए तुम तेज़ घोड़ा लेकर सदर जाओ; हम पीछे से आते हैं। (मीर क़ासिम से) चलिए अब चलें आपके ख़ीमे की तरफ़।

मीर क़ासिम—(लड़कों का हाथ पकड़कर) चलो बेटे ।

(एक तरफ़ से सूबेदार—दूसरी तरफ़ से बाक़ी सब जाते हैं ।)

दूसरा दृश्य

बाँदियों का गाना

सइयाँ—मति मारो पिचकारी मेरी भींग गई घाघरी
छोड़ो चातुरी—मति मारो पिचकारी
मारो मति मुट्ठी भरी पिया तू लियो जान बिसारी
छीन ले गयो, जान मेरी सइयाँ—मति मारो पिचकारी

पहली बाँदी—यह तो हुआ; पर आज नवाब साहब के तशरीफ़ ले आने में इतनी देर क्यों हो रही है ?

दूसरी बाँदी—सुना नहीं, आज शिकार करने जङ्गल में गये हैं। वहाँ से ख़बर भेजी है परदा-सवारी भेजने के लिए ।

पहली बाँदी—तो क्या आज कोई नया शिकार फँसाया है ?

दूसरी बाँदी—हो सकता है । नवाबी शौक़ ही तो है । जब पर्दा-सवारी का हुक्म हुआ है तो ज़रूर कोई नई चिड़िया फँसी होगी ।

पहली बाँदी—अच्छा ! देखो इस ख़ुर्द महल में कोई पिंजड़ा ख़ाली भी है या नहीं । एक पिंजड़े में तो दो चिड़ियाँ नहीं रह सकतीं ।

दूसरी बाँदी—जब तक चिड़िया हिल न जाय, तब तक किसी क़दर रह भी सकती है । मगर जब चिड़िया पालतू होकर "मियाँ मिट्ठू" पढ़ने लगे तब...

(एक बाँदी छाया को लेकर आती है।)

तीसरी बाँदी—अरी देखा, यह लौंडी ख़ुर्द महल में भीख माँगने आई है। लेकिन गाती ख़ूब है। सुनोगी ?

पहली बाँदी—अच्छा ! (छाया को) अरी क्या तुझे भीख माँगने की जगह नहीं मिली। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते पिंजरे के दरवाज़े पर आकर टकरा रही हो। जानती भी हो तुम्हारी तरह कमसिन हुस्नवाली अगर एक दफ़े इसके अन्दर आ जाय तो निकलना बहुत मुश्किल है—अगर कहीं नवाब साहब की नज़रों में पड़ गई।

छाया—(हँसकर) हा हा हा हा—देखा—क्या कहती हैं ये—

पहली बाँदी—पगली है क्या ?

दूसरी बाँदी—कहाँ की एक दीवानी को पकड़कर ले आई है ? क्यों री पगली, तू गा सकती है ?

छाया—हूँ।

दूसरी बाँदी—गा तो सही—तुझे भीख मिलेगी।

छाया—तुम सब कौन हो जी ?

दूसरी बाँदी—हम सब ? हम ?

पहली बाँदी—इससे तुझे क्या ?

छाया—(हँसकर) हा हा हा हा ! कहते न बना न ? देखा न मज़ा, अपना परिचय तक अपने मुँह न दे सकी ! हट ! तब तुम्हें क्या गाना सुनाऊँ ?

पहली बाँदी—क्यों ?

छाया—मेरा गाना बेसुरा हो जायगा !

पहली बाँदी—क्यों, बेसुरा क्यों होगा ?

छाया—बेसुरा होगा नहीं ? (हँसकर) हा हा हा हा ! कहती भी क्या है। रूप लेकर व्यौपार करती है—गाना—वह यहाँ प्राणहीन होकर आकाश में हाहाकार मचाता है—तुम्हें इसका पता नहीं चल रहा है ? तुम्हारे यहाँ का गीत—और सोने की प्याली में रक्खा हुआ विष—दोनों बराबर हैं।

पहली बाँदी—(स्वगत) कहती तो सच है। (प्रकट) तू सचमुच पगली है या बनी हुई ?

छाया—यह तो मुझे मालूम नहीं। उसने हाथ पकड़ा—जाति से निकाल दी गई। बदन पर एक दाग़ भी न लगा। लोगों ने कहा—घावों से भर गया ! बाप ने निकाल दिया, मा ने आँखें पोंछीं, देशवालों ने मुँह फेर लिया। जिसने हाथ पकड़ा था, उसको किसी ने कुछ न कहा। मेरी जाति भी गई, रोटी भी गई। रास्तों पर भटकती हूँ, कोई कुछ देता है तो खाती हूँ। नहीं मिलता, उपासी रह जाती हूँ। तुम्हारी भी तो जाति चली गई—तुम्हें मालूम नहीं—नहीं तो तुम सब इतनी सुन्दरी, पर तुम्हारी आँखों पर, मुँह पर—सब स्याही क्यों है ? छिः छिः ! क़ै आती है ?

दूसरी बाँदी—क़ै आती है तो यहाँ मरने क्यों आई ? जा, भाग यहाँ से। तुझे गाने की ज़रूरत नहीं।

पहली बाँदी—अरी दीवानी है बेचारी। पगली तू गा, हम तुझे खाने को देंगे।

छाया—जिसे अपने खाने का ठिकाना नहीं, वह बुलावे साथी! तुम खाती क्या हो? सिर्फ़ राख का ढेर! मैंने बहुत खाया है—बहुत खाया है। पेट भरा हुआ है, अब भूख नहीं।

दूसरी बाँदी—तो भाग यहाँ से।

छाया—भागूँगी नहीं? ज़रूरी भागूँगी! यहाँ की हवा भारी है। दम नहीं लिया जाता। क्यों जी, तुम लोग हँसती कैसे हो? तुम्हें रुलाई नहीं आती? बङ्गाल में तुम लोग और यहाँ पर भी तुम! बङ्गाल जल रहा है—यहाँ भी जलेगा—ख़ूब जलेगा। जलेगा नहीं? घर-घर में औरतों की छाती में आग जल रही है! दिल्ली गई; वहाँ भी बादशाह के हरम में यही आग! सब जायगा—सब जायगा। बङ्गाल, बिहार, अवध, दिल्ली सब इसी आग से जल जायगा। मैं जल रही हूँ, मैं जल रही हूँ।—मर्द सब खड़े-खड़े हँसते हैं। कोई रोता नहीं! कोई नहीं रोता। तुम सब औरतें हो, तुम्हारी भी आँखों में पानी नहीं। पर रोना पड़ेगा—ज़रूर रोना पड़ेगा। जाऊँ?

गीत दरबारी कानड़ा

कछु अजब खेल हैंगे
मोरे साहेब ग़रीबनिवाज के ॥ कछु० ॥
एकन को माल मुलक बख्श दीनो,
एक बनाये ताज के।
एकन हाथन में दीयो ठीकरा
फिरें भिखारी वे नाज के ॥ कछु० ॥

एक बनाये निपट निलाजे, एक बनाये लाज के
एक बनाये अपनी मौज के, यह करतब महराज के ॥कलु०॥

तीसरा दृश्य

[फ़ैज़ाबाद—सजा हुआ कमरा। दूर पर बहती हुई सरजू नदी नज़र आ रही है। बहू बेगम और गुलनार।]

बहू बेगम—क्यों तकल्लुफ़ कर रही हो बहन! इसे आप अपना मकान समझें। आपके शौहर, आपके बच्चे, वे सब अपने ही घर आये हैं। दिन कभी एक से नहीं जाते। आज अगर दिन ख़राब है तो दो दिन बाद फिर सुधर जायगा। तब हम आपके घर मेहमान होंगे।

गुलनार—अब मुझे वह उम्मीद नहीं! अगर वही क़िस्मत मेरी होती तो वालिद दुश्मनी न करते, वज़ीर—जिन्होंने मेरे शौहर का नमक खाया—बेवफ़ा न होते। आज वे हमारी ही छाती में छुरी भोंकने को तैयार न होते। सच कहती हूँ बहन, अल्लाह ताला से अब सिर्फ़ इतना ही माँगती हूँ कि वे मुझे जल्द ख़त्म कर दें। ज़िन्दगी का लुत्फ़ मैंने कभी न उठाया पर इतनी आफ़त सर पर आ जायगी, यह कभी ख़्वाब में भी न सोचा था।

बहू बेगम—सब अल्लाह की मरज़ी है। आफ़त भी उन्हीं की दी हुई है। उस आफ़त को मिटाने के मालिक भी वही हैं।

गुलनार—सच कहती हूँ बहन, नवाब की बेगम बनने के बाद ख़ुशी क्या है, एक रोज़ भी न जाना। मेरी जैसी एक नाचीज़ बाँदी के लिए

नवाब साहब का क़दम चूमना, वह कहीं क़िस्मत से किसी रोज़—लेकिन इन मोहताजी के दिनों में उनकी खिदमत करने का जो मौक़ा मुझे मिला है, उसके सामने सल्तनत मैं नहीं चाहती। पर वे तो चाहते हैं। बच्चों के लिए सोचती हूँ—इनका क्या होगा ?

वहू बेगम—मैं भी क़िस्मत से आज अवध के नवाब की बेगम हूँ। बचपन की याद, जवानी का तजुर्बा—इससे मैंने सिर्फ़ एक ही सबक़ सीखा है। बादशाह या नवाब की बेगम—ख़ुशी और तकलीफ़ के बाहर हैं। न तो ख़ुशी इनके लिए और न तकलीफ़ ही। इनकी जान, न तो रेगिस्तान है और न हरा-भरा बग़ीचा। शौहर अपना नहीं, बच्चे अपने नहीं, रिश्तेदार अपने नहीं। सल्तनत क़ायम रहने की चीज़ नहीं। ऐसी खौफ़नाक हालत में एक ही चीज़ ऐसी है, जिसको पकड़कर वे रह सकती हैं—वह है फ़र्ज़। आप अपने शौहर के साथ अपना फ़र्ज़ अदा कर रही हैं; इससे बड़ी ख़ुशी सल्तनत में नहीं। इस फ़र्ज़ की अदायगी में वह रौनक़ है जिसके रूबरू लख़ूखा कोहेनूरों का जलवा भी फीका नज़र आयगा।

(एक बाँदी आती है।)

बाँदी—नवाब साहब तशरीफ़ लाना चाहते हैं, अगर इजाज़त हो।

वहू बेगम—सलाम कहो। बहन, मैं नवाब साहब से मिलकर अभी आपके महल में आती हूँ।

गुलनार—कोई जल्दी नहीं। मैं अब आपकी मेहमान नहीं, आपकी छोटी बहन...। (जाती है।)

वहू बेगम—अल्लाह तेरी क़ुदरत !

(शुजा आते हैं ।)

शुजाउद्दौला—नवाब मीर क़ासिम के साथ आज देर हो गई, इसलिए दिनभर तुमसे मिल न सका। सुना है बेगम, इधर का सब इन्तज़ाम ?

बहू बेगम—नहीं।

शुजाउद्दौला—मीर क़ासिम मुझसे फ़ौज माँग रहे हैं। मीर जाफ़र को हराकर वे फिर अपनी सल्तनत पर क़ब्ज़ा करना चाहते हैं। मैं राज़ी हूँ। बक्सर जाकर हम ऐलाने-जङ्ग करेंगे। वहाँ फ़ौज और रसद भेजने का पूरा इन्तज़ाम कर लिया गया है।

बहू बेगम—मैं एक नाचीज़ औरत, इन सब बड़ी-बड़ी बातों को न तो जानती हूँ, और न समझती हूँ। लेकिन इस ख़ौफ़नाक काम में आपका हाथ देना वाजिब है या ग़ैरवाजिब, यह आपके समझने की बात है। मीर क़ासिम ने पनाह माँगी थी ; पनाह देना आपका फ़र्ज़ था। लेकिन उनकी तरफ़ से किसी के ख़िलाफ़ ऐलान-जङ्ग करना फ़र्ज़ है या नहीं, सोचकर देखिए। सुना है, मीर जाफ़र के पीछे एक बहुत बड़ी ताक़त है। इस जङ्ग का नतीजा क्या होगा, कोई नहीं जानता। मुझे डर है कि आप आख़िर तक मीर क़ासिम का साथ न दे सकेंगे, जिसका नतीजा यह होगा कि उनको और ज़्यादा मुसीबतों का सामना करना होगा।

शुजाउद्दौला—तुम जो कहती हो, वह सच है। लेकिन मैं ज़ुबान दे चुका हूँ। मैं मजबूर हूँ। और इस लड़ाई में मेरा फ़ायदा भी कम नहीं।

बहू बेगम—कैसे ?

शुजाउद्दौला—मीर क़ासिम से मेरी यह शर्त्त हुई है कि अगर हम जीत जायँगे तो सारा बिहार मुझे दे दिया जायगा। वे सिर्फ़ बंगाल और उड़ीसा की नवाबी करेंगे।

बहू बेगम—यह तो और भी ख़राब है।

शुजाउद्दौला—क्योंकर ?

बहू बेगम—मेरा जवाब शायद आपको पसन्द न आये। लेकिन मेरा ख़याल है कि अगर आप पनाह दिये हुए बदक़िस्मत नवाब की मदद के लिए ही इस जङ्ग में शरीक होते तो इन्शा-अल्लाह ज़रूर ख़ुदा आप पर मेहरबान होता। लेकिन मदद के नाम पर अपना मतलब हासिल करने के लिए ख़ुदगरज़ी से अगर इस काम में हाथ लगायेंगे तो शायद है अल्लाह की रहमत उस क़दर इम्दाद न करे !

शुजाउद्दौला—मुमकिन है, तुम जो कह रही हो वह ठीक हो, लेकिन ऐसी बातें मुल्लाओं की हैं न कि नवाब की बेगम की। मुल्क की हालत को देखो। दिल्ली की बादशाही दिन पर दिन कमज़ोर होती जा रही है। आज नादिरशाह, कल मराठे, दुश्मनों का इसी तरह हमले पर हमला—। हमारा अवध है ही कितनी सी जगह ? इस मौक़े पर जो ज़रा भी चालाकी से चलेगा, वही अपनी सल्तनत को बढ़ा लेगा। अगर मैं अवध के साथ बिहार को भी मिला सकूँ, कौन कह सकता है, शायद कल दिल्ली का रास्ता भी मेरे लिए खुल जाय।

बहू बेगम—क्या आप इस लड़ाई में कामयाबी हासिल कर सकेंगे ?

शुजाउद्दौला—न कर सकने की कोई वजह नज़र नहीं आती। मेरे पड़ोसी रुहेला अफ़ग़ान भी मेरी मदद करेंगे। मेरी अपनी फ़ौज भी

कुछ कम नहीं। बङ्गाल में भी ऐसे बहुत हैं जो अब भी मीर क़ासिम का साथ देंगे। वह सब ठीक है। फ़िक्र सिर्फ़ एक ही है। इतनी बड़ी लड़ाई का एकाएक इन्तज़ाम करना, इसमें जो सर्फ़ा पड़ेगा उतनी रक़म इस वक़्त ख़ज़ाने में मौजूद नहीं है।

बहू बेगम—आपका इरादा क्या है?

शुजाउद्दौला—मीर क़ासिम के पास जो छिपे हुए जवाहिरात मौजूद हैं, उनकी क़ीमत तीस लाख के क़रीब होगी। ख़ज़ाने में भी क़रीबन् इतना ही रुपया मौज़ूद है। लेकिन इस लड़ाई में कम से कम एक करोड़ रुपयों की ज़रूरत है। मैं चाहता हूँ, बाक़ी चालीस लाख इस वक़्त तुम हमको क़र्ज़ दे दो। लड़ाई में फ़तह पाने के साथ ही मैं तुम्हारा क़र्ज़ा अदा कर दूँगा।

बहू बेगम—क्या मैं अवध के नवाब की महाजन हूँ!

शुजाउद्दौला—तो मुझे ख़ैरात कर दो।

बहू बेगम—जो बात मेरे लिए मुमकिन नहीं, वहाँ मैं मजबूर हूँ। इतना रुपया मेरे पास नहीं है।

शुजाउद्दौला—इस बात पर कैसे यक़ीन करूँ! शादी के वक़्त चार करोड़ रुपये तुमको सिर्फ़ दहेज़ में मिले थे। उसके अलावा, तुम्हारी अपनी जो मिलकियत है—वह कम नहीं। अगर चाहो तो तुम आसानी से मेरी मदद कर सकती हो।

बहू बेगम—देखिए, यह आज नई बात नहीं। इसके पहले भी दो-चार दफ़ा आपने मुझसे माँगा है। मैंने कभी आपको दिया और कभी देने से इनकार कर दिया। इस मामले में आप नाराज़ भी हुए।

ऐसा भी हुआ कि आपने महीनों मेरा मुँह तक न देखा। मैं जानती हूँ कि रुपये न मिलने पर आप बहुत नाराज़ होंगे; लेकिन मैं सिर्फ़ इसलिए मजबूर हूँ कि आप जिस ख़ुदग़रज़ी के लिए लड़ाई में हाथ दे रहे हैं, वह कभी ख़ुदा को मंज़ूर नहीं हो सकता; इसलिए मैं एक हब्बा भी आपको नहीं दे सकती। हाँ, अगर आप ज़बरदस्ती से ले लें तो दूसरी बात है।

शुजाउद्दौला—शुजाउद्दौला अभी तक इतना कमीना नहीं हुआ है कि ज़बरदस्ती वह अपनी बीबी की दौलत छीन ले। मैं तो तुमसे सीधी तरह माँगने आया था—वह भी तुम्हीं लोगों की भलाई की ग़रज़ से। तुम जानती हो, मेरी बहुत सी बेगमें हैं, उनके बच्चे हैं। छोटा सा अवध, उसकी आमदनी इतनी काफ़ी नहीं है कि ये सब आगे चलकर नवाब की हैसियत के साथ दिन बसर कर सकें। तुम मेरी ख़ास बेगम हो। तुम्हारा ही लड़का इस सल्तनत का नवाब होगा; इसी उम्मीद पर तुम्हारे पास आया था कि तुम ज़रूर मेरी मदद करोगी।

बहू बेगम—आप जो फ़रमा रहे हैं, वह दुरुस्त है। लेकिन अब भी मेरी यही अर्ज़ है कि इस लड़ाई से आप अलग रहें। मीर क़ासिम के लिए यह जङ्ग जायज़ है, पर आपको अपनी ग़रज़ के लिए नहीं। अगर दूसरा कोई हमारी सल्तनत पर हमला करता तो मैं इसी वक्त जो कुछ मेरे पास है, नज़र कर देती; लेकिन जान बूझकर इस नाजायज़ लड़ाई में मैं आपकी कोई मदद करने से मजबूर हूँ; आप मुझे माफ़ करें।

शुजाउद्दौला—मुआफ़ किया। हम कल ही रवाना हो रहे हैं। लौटेंगे या नहीं, यह ख़ुदा जानता है। (स्वगत) मीर क़ासिम क़िस्मतवाला

है। सल्तनत उसके पास नहीं, लेकिन दिलपसन्द, दिलदार, दिल के दर्द को समझनेवाली बीबी उसके साथ है। मैं बदक़िस्मत हूँ—कोई मेरा अपना नहीं। (जाता है।)

बहू बेगम—आप नाराज़ होकर जा रहे हैं। जाइए—लाचार हूँ। फ़र्ज़! नवाब की बेगम की ज़िन्दगी—कोई क़द्र नहीं उसकी। शौहर ऐयाश—बदचलन!—दिल की वहाँ कोई क़ीमत नहीं। दीन और ईमान,—उसकी वहाँ कोई जगह नहीं। इसी लिए दिल्ली के तख़्त की आज कोई ताक़त नहीं। मीर क़ासिम—बदक़िस्मत नवाब—अवध की तक़दीर में क्या है—कोई नहीं कह सकता। घने बादल आसमान पर छा रहे हैं। मेरा फ़र्ज़ क्या है? या ख़ुदा—ऐसी दुआ दे कि ऐयाशी से भरे हुए रङ्गमहल की झूटी चमक-दमक के अंदर तुझको न भूलूँ। (जाती है।)

चौथा दृश्य

सहेलियाँ

गाना

झिलीमिली पनिया—
आ री ननदी मोरी आ री ननदिया—
पनिया भरन को हम आई जमुना तट
जल बिच कोई सखी गावत कल कल
कल कल सुन सखी हमें न पड़त कल
खिलन चाहत कलियाँ—।

पहली बाँदी—अरी देख, दोनों वहाँ खड़े हैं।

दूसरी बाँदी—आशिक़ और माशूक़ जब एक साथ मिलते हैं तो कैसी ख़ुशी होती है।

पहली—जब तू अपने आशिक़ से मिलती है, वैसी।......

(फ़ैज़ुल्ला और जिन्नतउन्निसा आते हैं।)

जिन्नतउन्निसा—सहेलियों के सामने जाने में मुझे शर्म आ रही है!

फ़ैज़ुल्ला—मैंने तो शर्म को तुम्हारे उन क़दमों के नीचे दबा दिया है।

जिन्नतउन्निसा—फिर वही!

(गाती है।)

मैं तुम्हारी—मैं तुम्हारी
जागती रहती हूँ जब तक
नींद में सोती हूँ जब तक
ख़्वाब में जानूँ न कब तक
और,—वह दिन क़यामत तक
मैं तुम्हारी—मैं तुम्हारी।
मेरी जाँ इस दिल में देखो
काटकर दिल को मेरे
क़तरे लहू में देखो
पाओगे लिखा हुआ
खोलकर नज़र देखो
मैं तुम्हारी—मैं तुम्हारी।

फ़ैज़ुल्ला—जब क़न्दहार में क़ैद था, दिन-रात तुम्हारे ख़ूबसूरत चेहरे का जलवा मेरी आँखों के सामने रहता था। कितनी उम्मीदी, नाउम्मीदी, ख़ुशी और मुसीबत भरे दिनों में कितनी रातें जागते ही गुज़री हैं। एक अल्लाह ही जानता है।

जिन्नतउन्निसा—आपको अपने दिल की बातें समझाने के लिए ज़बान मदद करती है। मेरा दिल अपने दिल की बात सिर्फ़ दिल से ही कहता है, दूसरे से नहीं।

(सेहेलियाँ गाती हैं।)

दिलदार दिलदार

दिल की बातें दिल से समझो, अगर दिया है तुमने दिल
अगर न समझो तो हम कहेंगे नहीं दिया है तुमने दिल

दिलदार दिलदार

लब के पीछे मुस्कुराहट आँख की तिरछी ज़बाँ
काली भौंहें तन के कहतीं, क्या नहीं समझा जबाँ
हुस्न पर लिक्खा है उसने, हुस्न का जो बाग़बाँ
काश गर, अब भी न समझो, नहीं दिया है तुमने दिल

दिलदार दिलदार

जिन्नतउन्निसा—वह दादी जान आ रही हैं, मैं भागूँ।

(जाती है।)

फ़ैज़ुल्ला—आँखों के सामने से भाग सकती हो, दिल के सामने से नहीं।

(जाता है)

पहली बाँदी—भागेगी कहाँ, हम अभी पकड़ लाती हैं।

(सखियाँ जाती हैं।)

(हाफ़िज़ रहमत खाँ और उनकी बीबियाँ आती हैं।)

हाफ़िज़ की बीबी—कल ही जाना होगा।

हाफ़िज़ रहमत खाँ—हाँ, कल ही—सुबह।

हाफ़िज़ की बीबी—क्या फ़ैज़ुल्ला की जगह और किसी को भेजा नहीं जा सकता ?

हाफ़िज़०—भेजा क्यों नहीं जा सकता ? लेकिन मेरी ख़्वाहिश है कि इस मौक़े पर फ़ैज़ुल्ला कुछ जङ्गी तजुर्बा हासिल कर आये। मैं फ़ैज़ुल्ला से पूछकर देखूँगा, अगर उसे कुछ भी उज्र होगा तो मैं दूसरा इन्तज़ाम करूँगा।

हाफ़िज़ की बीबी—शादी का सब इन्तज़ाम हो गया है। अगर शादी के दो-चार रोज़ बाद भेज दिया जाता तो अच्छा था।

हाफ़िज़०—एक ही बात है। लौटकर भी ख़ुशी के साथ शादी हो सकती है।

हाफ़िज़ की बीबी—शायद दोनों के दिल को ज़रा तक़लीफ़ हो।

हाफ़िज़०—अगर ज़रा भी उज्र उसको होगा तो दूसरे किसी को रुहेलों का सरदार बनाकर भेजूँगा।—फ़ैज़ुल्ला !

(फ़ैज़ुल्ला आता है।)

फ़ैज़ुल्ला—ग़ुलाम हाज़िर है, दादा जान !

हाफ़िज़०—फ़ैज़ाबाद के नवाब शुजाउद्दौला का आदमी आया है। दो साल पहले जब मराठों ने हमारी सरहद पर हमला किया

था, उस वक़ हमने शुजाउद्दौला से जो सुलह की थी उसमें शर्त यह थी कि वे हमारी मदद करेंगे जिसके बदले हम उनको चालीस लाख रुपये देंगे और वक़्त ज़रूरत फ़ौज देकर उनकी मदद करेंगे, जिसमें फ़ौजदार होगा रुहेला सरदार के ही घर का कोई लायक शख्स। हाल यह है कि मीर क़ासिम को मदद देने की ग़रज़ से शुजाउद्दौला मीर जाफ़र से जङ्ग छेड़ने जा रहे हैं और हमसे फ़ौजदार के मातहत फ़ौज माँगी है—तुम्हारी क्या राय है ?

फ़ैज़ुल्ला—आपका ख़याल क्या है ?

हाफ़िज़०—मैं ख़याल करता हूँ, अपने छोटे भाई दुंदी ख़ाँ की मातहती में फ़ौज भेज दूँ।

फ़ैज़ुल्ला—नहीं दादाजान, यह आपका ख़याल नहीं है। आपकी सच्ची मरज़ी यह है कि मैं बाख़ुशी इस फ़ौज को लेकर जाऊँ।

हाफ़िज़०—शाबाश बेटा। अल्लाह तुमको सलामत रक्खें। हाँ, यही मेरी मरज़ी है, लेकिन तुम्हारी दादीजान......

फ़ैज़ुल्ला—वह मैं समझ गया। लेकिन दादाजान ! मेरी अर्ज़ है कि आप अपना ख़याल बराय मेहरबानी न बदलें। मैं रुहेला फ़ौज का फ़ौजदार बनकर शुजाउद्दौला की मदद को जाऊँगा। जङ्ग से जीती हुई फ़तह की कामयाबी का हार पहनकर नौशा बनूँगा।—क्यों है न दादीजान ?

हाफ़िज़ की बीबी—बहादुर सर्दार अली मुहम्मद के तुम लायक़ बेटे हो।

फ़ैज़ुल्ला—और वालिद शरीफ़ सर्दार हाफ़िज़ रहमत साहब के लायक़ भतीजे थे।

हाफ़िज़०—अब मैं बुड्ढा हो गया हूँ। मेरी बहादुरी की पहचान अब तुम्हीं लोग हो। नहीं तो कहाँ कल तुम्हारी शादी का दिन है और मैं भेज रहा हूँ तुम्हें मैदाने-जङ्ग में। मालूम नहीं क्यों, लड़ाई का नाम सुनते ही अब भी ख़ून खौलने लगता है। इसी लिए तो तुम्हारी दादीजान से कह रहा था, शादी का मौक़ा तो पीछे भी मिलेगा—और शादी में कोई ख़ासियत नहीं। वह तो कायर भी करते हैं, नालायक़ भी करते हैं, लेकिन लड़ाई में सिर्फ़ बहादुर जाया करते हैं।

फ़ैज़ुल्ला—किस वक़्त रुख़सत होना होगा?

हाफ़िज़०—कल सुबह। मैंने फ़ौज को हुक्म दे दिया है। अब तुम्हारी बात मैं इसी वक़्त दरबार में चलकर ऐलान कर देता हूँ। तुम तैयारी करो।

(जाता है।)

हाफ़िज़ की बीबी—लड़ाई का नाम सुनते ही जोश में आ जाते हैं—यह रुहेलों में एक ख़ास बात है। आप तो हुक्म दे गये—शादी बन्द रहे—फ़ैज़ुल्ला के जङ्ग से लौट आने पर दोनों ख़ुशियाँ एक साथ मनाई जायँगी। बहादुर फ़ैज़ुल्ला भी जङ्गी नशे में मस्त! अब देखें इधर बहादुर साहब की होनेवाली बीवी क्या कहती है। मगर कहेगी क्या, शरमीली लड़की है, सिर्फ़ अकेले में लम्बी साँसें भरेगी।

(जाती है।)

फ़ैज़ुल्ला—जङ्ग के जोश में मुहब्बत को कुछ रोज़ दिल के अन्दर बन्द रक्खूँगा। कङ्गनों की झङ्कार नहीं—फूलों का बिस्तर नहीं—तलवारों की झङ्कार और खुला हुआ, ख़ून से लथपथ, लड़ाई का मैदान—

लेकिन प्यारी जिन्नत—तुम्हारी याद ही होगी थकावट दूर करने के लिए मेरी अचूक दवा।

(जाता है।)

——

पाँचवाँ दृश्य

(बहू बेगम और खोजा दुराब अली)

दुराब अली—अब क्या किया जाय, बेगम साहिबा ?

बहू बेगम—कुछ समझ में नहीं आता। वज़ीर अमीर बेग क्या कहते हैं ?

दुराब अली—उनके बरताव पर मुझे शुबहा होता है। नवाब साहब ने ख़बर भेजी है कि बक्सर में उनकी हार हुई है। लड़ाई से भागकर बक्सर के पास एक पहाड़ी जङ्गल में उन्होंने डेरा डाला है। साथ में जो रसद थी वह ख़त्म हो गई है। फ़ौज धीरे-धीरे बग़ावत के रास्ते पर जा रही है। यहाँ तक कि उनमें सलाह हो रही है कि नवाब को क़त्ल कर दूसरे किसी को मसनद पर बिठायेंगे।

बहू बेगम—इस बग़ावत के पीछे ख़ास-ख़ास कौन शख्स हैं, कुछ पता है ?

दुराब अली—नहीं, पूरा पता नहीं है। लेकिन सिर्फ़ इतना मालूम हुआ है कि अमीर बेग ख़ुद इस गिरोह को चला रहा है। वज़ीर मुर्तज़ा ख़ाँ, हैदर बेग यह नवाब के साथ हैं, लेकिन मुझे शक है कि ये भी वफ़ादार नहीं हैं। हिन्दू वज़ीर बेनीराव बीमार हैं। अगर वे मौजूद होते तो शायद नवाब साहब के ख़िलाफ़ इतनी कार्रवाई न हो सकती।

बहू बेगम—बक्सर में हार होगी, यह मैं पहले ही जानती थी। नवाब साहब से मैंने पहले ही अर्ज़ की थी कि इस लड़ाई को न छेड़ें। लेकिन उन्होंने मेरी बात नहीं मानी। इधर नमकहराम वज़ीरों को भी अच्छा मौक़ा हाथ लगा है।

दुराब अली—इसी लिए अमीर बेग नवाब को रुपये या रसद नहीं भेज रहे हैं। कहते हैं ख़जाने में रुपये नहीं हैं। समझ में नहीं आता कि कैसे क्या किया जाय।

बहू बेगम—मीर क़ासिम कहाँ हैं?

दुराब अली—अब भी नवाब साहब के साथ हैं। सुनने में आता है कि नवाब उन पर बहुत नाराज़ हैं। कहते हैं, मीर क़ासिम ही उनकी मुसीबत की जड़ हैं।

बहू बेगम—बदक़िस्मत मीर क़ासिम। उनका क्या क़सूर?

दुराब अली—ख़ैर, जो होना था वह हुआ; लेकिन इधर अगर दो-एक रोज़ के अन्दर ही उनको रुपये न मिले तो बाग़ी सिपाही उनकी जान तक ले सकते हैं।

बहू बेगम—लेकिन अमीर बेग का भी कुछ यक़ीन नहीं। अगर उसके हाथ रुपया दिया जाय और वह न भेजे?

दुराब अली—तब क्या होगा?

बहू बेगम—तुम अभी अमीर बेग को ख़बर दो कि इसी वक्त दरबार बुलाया जाय और सब दरबार में हाज़िर हों। मैं ख़ुद दरबार में जाकर मामले को समझने की कोशिश करूँगी।

दुराब अली—जो हुक्म! (दोनों जाते हैं)

छठा दृश्य

(बक्सर के पास जङ्गल में मीर क़ासिम का डेरा। समय—रात—मीर क़ासिम और ग़फ़ूर अली।)

मीर क़ासिम—बक्सर की लड़ाई में भी शिकस्त खानी पड़ी। मीर क़ासिम की क़िस्मत ही ख़राब है। लेकिन इस हार के लिए मैं ज़िम्मेदार नहीं हूँ। शुजा अगर मेरी बात मानकर दुश्मन को हमला करने का मौक़ा न देता और ख़ुद एक ब एक उन पर हमला कर देता तो कभी यह हार न होती। अब क्या किया जाय? मालूम होता है, शुजा मुझसे नाराज़ हो रहा है। जितनी दौलत थी, सब दे दी—वह और माँगता है। बिना रसद के उसकी फ़ौज बाग़ी हो रही है। वह उसका और मेरा दोनों का क़त्ल कर सकती है।

ग़फ़ूर अली—अल्लाह की मरज़ी क्या है, कोई नहीं जानता। हाय नमकहराम मुसलमान! तुम्हारे ही लिए बङ्गाल के नवाब मीर क़ासिम की आज यह हालत है।

मीर क़ासिम—सिर्फ़ मुसलमान ही क्यों, हिन्दुओं ने भी कुछ कम नमकहरामी नहीं की है। अफ़सोस, बेवफ़ाओं को सज़ा न दे सका। नहीं तो ख्वाहिश थी कि मुँगेर छोड़ने के पहले बङ्गाल को नमकहरामों से ख़ाली कर जाऊँ, जिससे आगे चलकर किसी और नवाब को धोखा न उठाना पड़े। पेड़ ज़िन्दा हैं, बङ्गाल की ज़मीन उपजाऊ है—पुश्त दर पुश्त यहाँ नमकहराम पैदा होंगे। फिर राय दुर्लभ, जगत् सेठ,

राजवल्लभ, कृष्णचन्द्र अलग अलग शकलों में पैदा होंगे। इन्होंने मुल्क नहीं चाहा, चाही थी आज़ादी—इसके बाद भी यह मुल्क की ओर न देखेंगे; देखेंगे अपनी ओर, अपनी ख़ुदग़रज़ी की ओर।

ग़फ़ूर अली—और मुसलमान !

मीर क़ासिम—हिन्दुओं और मुसलमानों में झगड़ा—जिसका मतलब दोने-ख़ुदकुशी। नतीजा—ग़ुलामी।

ग़फ़ूर अली—बेगम और आपके दो साहबज़ादे—उनका क्या होगा ! लड़ाई में जो होना था, वह तो हो गया। दूसरे के घर—दूसरे की मातहती में बङ्गाल, बिहार, उड़ीसा की नवाब-बेगम, हाय अफ़सोस, क़िस्मत !

मीर क़ासिम—उनको साथ लिये दर-दर भटककर भीख माँगना, यह भी कैसे मुमकिन होगा ? आफ़ताब और चाँद भी जिसका मुँह तक न देख सके थे उसका हाथ पकड़कर दर बदर फिरूँगा—बङ्गाल, बिहार, उड़ीसा का नवाब, मैं। ग़फ़ूर, इसके पहले भी क्या किसी नवाब की ऐसी हालत हुई है—बतला सकते हो ! जो पहले ग़रीब की तरह मेरे पैरों पर पगड़ी रखकर सिर झुकाकर सामने खड़े रहते थे, हाथ जोड़कर मेरी थोड़ी-सी मेहरबानी के लिए, और आज उन्हीं के डर से मैं शुजाउद्दौला के सामने भिखमंगे की तरह खड़ा हूँ—ज़रा सी मेहरबानी के लिए। मेरी बीबी, मेरे बच्चे उसी की मेहरबानी की दी हुई रोटियाँ तोड़ रहे हैं। मैंने पहले ही मना किया था, उन्होंने सुना नहीं। अपने वालिद मीर जाफ़र की रोटियों से ख़ैरात की रोटियाँ उन्हें ज़्यादा पसन्द थीं।

ग़फ़ूर अली--रोशनी का इन्तज़ाम नहीं है। सारे दिन खाने को नहीं मिला। पनाह देनेवाला पूछता भी नहीं। अब आपकी जान कैसे बचाऊँ?

मीर क़ासिम—अपनी जान बचाने की फ़िक्र करो। मेरी ओर न देखो। किसी की तरफ़ देखने की ज़रूरत नहीं। मैं सोच रहा हूँ, जब सबने मेरा साथ छोड़ दिया, तुम क्यों अटके हुए हो?

ग़फ़ूर अली—मैं तो नवाब का मुसाहब नहीं हूँ। नवाब की नौकरी लेकर मैं बङ्गाल में नहीं आया था। बचपन में जब दिल्ली में आप रहते थे, आठ साल की उम्र के क़ासिमअली और मैं था जवान। उसी रोज़ से मैं साथ हुआ था। आप बादशाह की फ़ौज में घुसे, बङ्गाल-सरकार के अमीर हुए—मीर जाफ़र के दामाद हुए। मीर जाफ़र के कमज़ोर हाथों से बङ्गाल की नवाबी ली—मैं, ग़फ़ूर अली, जैसे बराबर साथ में रहा, आज भी हूँ। जब आप बङ्गाल के सूबेदार थे तब भी ग़फ़ूर आपके साथ था; आज आप भिखारी हैं—अब भी मैं वही ग़फ़ूर हूँ—आपका ख़ादिम!

मीर क़ासिम--नहीं नहीं; तुम मेरे ख़ादिम नहीं, मेरे अज़ीज़ ख़ादिम की शक्ल में तुम मेरे साथ पैग़म्बर की दुआ हो!

(लक्ष्मीप्रसाद आते हैं)

लक्ष्मीप्रसाद—क्या नवाब साहब यहाँ हैं?

मीर क़ासिम—कौन?

लक्ष्मीप्रसाद—मुझे पहचान न सकेंगे। मैं एक विश्वासघाती हूँ।

मीर क़ासिम—अच्छा, क्या चाहते हो?

लक्ष्मीप्रसाद—चाहने लायक़ कोई वस्तु तुम्हारे पास नहीं, चाहूँगा क्या ? मैं यह कहने आया हूँ कि आप यहाँ से भाग जायँ।

मीर क़ासिम—भाग जाऊँ ? क्यों ? तुम हो कौन ?

लक्ष्मीप्रसाद—शराबी हूँ और दूसरा परिचय मेरा यह है कि मैं नवाब शुजाउद्दौला का मुसाहब हूँ। रङ्गमहल में भी नवाब साहब के साथ रहता हूँ और लड़ाई में आकर भी उनके साथ शराब पीता हूँ। आज कई रोज़ से शराब की बोतलें ख़ाली हैं इसी लिए बैठे-बैठे ऊँघ रहा था कि कान में आवाज़ आई—"मीर क़ासिम के पास अभी जवाहरात होंगे, उसको ख़तम करके छीन लो"। बातें ज़रा बेसुरी थीं—शराबी का दिल पिघलता ज़रा जल्दी है—इसी लिए सोचा कि ख़बर दे दूँ। अच्छा, अब यहाँ से भाग जाओ।

मीर क़ासिम—मगर क्यों भागूँ ? सचमुच मेरे पास कुछ भी नहीं है।

लक्ष्मीप्रसाद—धनी होने का नाम भी ख़राब है। इसी लिए तो मैं धनी नहीं हुआ।

ग़फ़ूर अली—शुजाउद्दौला, शुजाउद्दौला ! दोस्त कहकर, पनाह देकर तुम्हारा यह बरताव ?

मीर क़ासिम—इसमें कोई ताज्जुब की बात नहीं। यक़ीन के साथ जो अपने को किसी के हाथ सौंप दे, उसकी छाती में छुरी भोंक देना जितना आसान है, दूसरे की छाती में छुरी भोंक देना उतना आसान नहीं।

ग़फ़ूर अली—मेरी तो कुछ समझ में नहीं आ रहा है। ख़ुद पनाह देकर शुजाउद्दौला ऐसा क्योंकर करेगा ? उसे पनाह देने की ज़रूरत

ही क्या थी ? और दुश्मनी करने का फ़ायदा ही क्या था। दो दिन पहले जो दोस्त कहकर गले मिलता था वही क़त्ल का हुक्म देगा ?

लक्ष्मीप्रसाद—मियाँ साहब ! तुम्हारी उम्र तो हो गई है; लेकिन तुम्हें ज्ञान नहीं हुआ। उपकार करना जिसके लिए एक शौक़ की चीज़ है और उपकार करने के पीछे जिसके हृदय में कोई आशा रहती है, वे किस समय मित्र हैं और किस समय शत्रु—यह स्वयं विधाता के लिए समझना कठिन है। जाने दो—मैं तो एक शराबी हूँ—बड़ी-बड़ी बातें कैसे समझूँगा ? कान में एक बात सुनाई दी—आकर कह दिया। अब अगर प्राण बचाना चाहो तो सीधे र.फूचक्कर हो जाओ। विश्वासघाती दुनिया में कौन नहीं है ! विश्वासघातक का काम तो मैंने भी किया। शुजाउद्दौला के गुप्त परामर्श का संवाद आकर तुमको दे दिया। अगर देश को लौट सकूँ तो एक रोज़ दो गिलास ज़्यादा पीकर इसका प्रायश्चित्त करूँगा। अब तुम यहाँ से सीधे भाग जाओ

(जाता है।)

मीर क़ासिम—मैं भागूँगा ? कहाँ भागूँगा ? नहीं, मैं नहीं भागूँगा। उससे यही अच्छा है ग़फ़ूर, तुम यहाँ से चले जाओ। मेरे पास अब कुछ नहीं है, सिवाय इन दो चार चीज़ों के जो बदन पर हैं, उनसे शुजाउद्दौला का पेट नहीं भरेगा। इन्हें तुम ले जाओ। अगर मर जाऊँ तो सिर्फ़ इतना याद रखना कि मेरी यतीम बीबी, दो बच्चों के साथ, शुजाउद्दौला के महल में है। हो सके तो उन्हें नमकहरामी की रोटी न खाने देना। उस दोज़ख़ से उन्हें निकालकर तुम अपनी झोंपड़ी में ले

जाना और इन चीज़ों को बेचकर उनको रूखा-सूखा कुछ खाने का बन्दोबस्त कर देना जिसमें भीख न माँगनी पड़े।

ग़फ़ूर—और आप ?

मीर क़ासिम—अगर जीता रहा तो मैं भी आकर तुम्हारी झोंपड़ी का एक मेहमान बनूँगा। वहाँ मैं आराम से वफ़ादार ख़ादिम के दिल की मसनद पर नवाबी करूँगा।

(दोनों जाते हैं।)

सातवाँ दृश्य

(शुजाउद्दौला का ख़ीमा; शुजा, मुर्तज़ा ख़ाँ और हैदर बेग।)

शुजाउद्दौला—तीन रोज़ हो गये। अमीर बेग ने न तो रुपया भेजा और न कोई ख़बर।

मुर्तज़ा—बाग़ी सिपाहियों को रोकना मुश्किल हो गया है। वे सब चिल्ला रहे हैं—"या तो हमको खाने को दो; नहीं तो नवाब की बोटियाँ खायेंगे, क्योंकि वे ही इसके लिए ज़िम्मेदार हैं।

(मुर्तज़ा और हैदर जाते हैं।)

शुजाउद्दौला—मैं चारों तरफ़ अँधेरा देख रहा हूँ। समझ में नहीं आता, अमीर बेग क्यों नहीं रुपया भेजता। शायद अन्दर अन्दर एक कार्रवाई चल रही है। हैदर बेग और मुर्तज़ा ख़ाँ का चाल-चलन शक से ख़ाली नहीं। अगर ख़ुदा फिर दिन दे, अगर फ़ैज़ाबाद लौट सकूँ तब इसका इन्तज़ाम करूँगा। सिर्फ़ रुहेला अफ़ग़ान ही चुप हैं।

शायद .फै.ज़ुल्ला पर भरोसा किया जा सकता है। देखूँ, शायद उससे काम हो सके। फैज़ुल्ला !

(.फैज़ुल्ला आता है)

.फैज़ुल्ला—आदाब !

शुजाउद्दौला—अगर्चे तुम्हारी उम्र कम है; लेकिन जो बहादुरी, हिम्मत और वफ़ादारी तुमने दिखाई है, उसकी जितनी तारीफ़ की जाय, कम ही है। मेरी फ़ौज बाग़ी हो रही है, लेकिन तुम्हारी फ़ौज ठण्डी है। मैं अपने किसी भी शख़्स पर यक़ीन नहीं रखता, लेकिन क्या मैं तुम पर यक़ीन रख सकता हूँ ?

.फै.ज़ुल्ला—नवाब साहब, रुहेला अफ़ग़ानों को हिन्दुस्तान में आये अभी थोड़े ही रोज़ हुए हैं। अभी तक यहाँ की हवा उनको लगी नहीं है इसलिए रुहेला अफ़ग़ान बेवफ़ा और नमकहराम नहीं हैं।

शुजाउद्दौला—तुम्हारी बातें सुनकर बहुत .खुश हुआ। मेरी हालत तुम देख रहे हो। अगर आज रात को मैं रुपयों का इन्तज़ाम न कर सका तो कल मेरी जान पर आयगी।

.फै.ज़ुल्ला—यह मैं समझ रहा हूँ, और यह भी समझ रहा हूँ कि यह आपके वज़ीरों की ही कार्रवाई है।

शुजाउद्दौला—तुम अक़्लमन्द हो—तुम्हारा ख़याल ग़लत नहीं है। मुझे भी यही शुबहा है। लेकिन इस वक़्त भी मेरे बचने का एक रास्ता है।

.फै.ज़ुल्ला—फ़रमाइए।

शुजाउद्दौला—मुझे यक़ीन है, मीर क़ासिम के पास अभी दौलत है, लेकिन वह देता नहीं है। उसे समझना चाहिए कि आज उसी के लिए हमारे ऊपर यह मुसीबत है। जब वह अपनी ख़ुशी से नहीं देता तो हम ज़बरदस्ती उससे छीन लेंगे। तुम वफ़ादार हो; मैं इस काम को तुम्हारे ही सुपुर्द करना चाहता हूँ।

फ़ैज़ुल्ला—ख़ता माफ़ हो, नवाब साहब! मीर क़ासिम को आपने पनाह दी थी न।

शुजाउद्दौला—हाँ, देख रहा हूँ ग़लती की थी।

फ़ैज़ुल्ला—जिसको पनाह दी, उसी को लूटना चाहते हैं?

शुजाउद्दौला—लाचारी! दूसरा कोई रास्ता बचने का नहीं।

फ़ैज़ुल्ला—इसलिए इस तरीक़े से बचना चाहते हैं! सब कुछ खोकर, आपकी तरफ़ देखकर, बङ्गाल की मसनद का ख़्वाब देखते हुए, जो बदक़िस्मत अपने बीबी-बच्चों की इज़्ज़त तक को भूलकर आपके पास मदद के लिए आया था, और आपने ख़ुशी के साथ पनाह देते हुए मदद करना क़बूल किया था, अपनी जान बचाने के लिए उसकी बची-खुची दो-चार चीज़ों को आप लूट लेना चाहते हैं और उस काम को करने की ज़िम्मेदारी आप देना चाहते हैं मुझे? मैं रुहेला अफ़ग़ान हूँ। एक तलवार की मदद और ख़ुदा ताला की दुआ पर भरोसा रखकर जिसके बाप-दादे अफ़ग़ानिस्तान से हिन्दुस्तान आये और जिन्होंने यहाँ इतनी बड़ी सल्तनत क़ायम की उन्हीं के वंशज से आप कह रहे हैं—पनाह दिये को लूट लो। नवाब साहब, क्या यह ख़ुद को बचाना है या ख़ुदकुशी?

शुजाउद्दौला—मैंने तुमसे नसीहत नहीं माँगी है। मैं सिर्फ़ जानना चाहता हूँ कि तुम मेरा हुक्म मानोगे या नहीं ?

फ़ैज़ुल्ला—अब सोच रहा हूँ कि ऐसी कमीनी बात सुनने के पहले मैं चला क्यों न गया। क्यों मेरी फ़ौज ने बग़ावत नहीं की ? अगर आपका ऐसा इरादा मुझे पहले मालूम होता तो मैं कभी इस लड़ाई में शरीक न होता। मीर क़ासिम को लूटूँगा मैं ? नवाब साहब ! नवाबी हमेशा की चीज़ नहीं है। लेकिन इन्सानियत हमेशा की चीज़ है। जो मुसल्ले ईमान नहीं, वे मुसलमान नहीं। जब एक दफ़े उस ग़रीब को पनाह दी है तो उसके साथ निभाइए।

शुजाउद्दौला—तुम सचमुच अभी लड़के हो। ख़ैर, तुम जाओ। मैं अपने वज़ीरों के ज़रिये यह काम कराऊँगा।

फ़ैज़ुल्ला—काश मैं न जानता होता तो शायद आपके वज़ीर कामयाब हो जाते। लेकिन चूँकि अब मुझे मालूम हो गया है, यह मुमकिन नहीं कि आप ऐसी नाजायज़ हरकत कर जावें। मैं रुहेला अफ़ग़ानों के सरदार हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ का पोता हूँ। उनका ख़ादिम हूँ। उनकी नसीहत है, जान देकर भी कमज़ोर को बचाना। बक्सर की लड़ाई में एक लालची, डरपोक, बेईमान मुसलमान की मदद करने के लिए आकर मैं कभी उन नसीहतों को भूल नहीं सकता। मीर क़ासिम को अगर दुनिया में कोई पनाह न दे तो मरते दम तक रुहेला अफ़ग़ान उसको बचायेंगे। नवाब साहब, मैं अपनी फ़ौज के साथ मीर क़ासिम को बचाने के लिए चला। अगर आपमें क़ुव्वत हो तो आप कोशिश कर सकते हैं। सलाम !

(जाता है)

शुजाउद्दौला—यह तो दूसरी मुसीबत सर पर आ खड़ी हुई। क्या करूँ! आखिरी उम्मीद भी खतम हो गई।

(बाहर बाग़ी सिपाहियों की आवाज़ें)

बाग़ी सिपाहियों की एक साथ अलग-अलग बातें—सिर्फ़ बातों से पेट नहीं भरेगा। हमको खाने को दो। नहीं तो हम नवाब की बोटियां खायेंगे

शुजाउद्दौला—बाग़ी सिपाहियों की हलचल। इतनी रात को रुपये और रसद कहाँ से आयेंगे? फ़ैज़ुल्ला अपना फ़ौज लेकर चला गया। उसके डर से हमारी फ़ौज अब तक कुछ चुप भी थी। उफ़्, अपनी बेवक़ूफ़ी से मैंने उतनी बड़ी मदद भी खो दी!

(मुर्तज़ा खाँ आता है)

मुर्तज़ा खाँ—नवाब साहब! एकाएक फ़ैज़ुल्ला अपनी फ़ौज लेकर चला क्यों गया? क्या वे भी बाग़ी हो गये?

शुजाउद्दौला—बाग़ी! बाग़ी! आज सब बाग़ी हैं; अपना, बेगाना, दुश्मन, दोस्त—आज कोई नहीं है। जो हैं, वे सब बाग़ी! बाग़ी मीर क़ासिम मीर क़ासिम—क्या कोई उसका सर लाकर मुझे दे सकता है? आज उसी के लिए मुझपर यह मुसीबत है।

बाहर बाग़ी सिपाहियों की आवाज़ें—कोई बात नहीं सुनेंगे। चलो खीमे पर हमला करो, नवाब को क़त्ल करो।

शुजाउद्दौला—मुर्तज़ा खाँ! अब भी खड़े हो जाओ, जाओ। सुनते नहीं हो बग़ावत की आवाज़ें? वे खीमे पर हमला करना चाहते हैं। मुझे क़त्ल करेंगे। जाओ, सिर्फ़ रात भर चुप रहने को कहो। मैं उनके

क़दमों पर गिरकर अर्ज़ कर रहा हूँ। एक रात और तकलीफ़ करें। जल्दी जाओ।

मुर्तज़ा ख़ाँ—(स्वगत) घरवालों से कहता हूँ जागते रहो, और चोर से कहता हूँ चोरी करो। जाऊँ, इस नवाब को जितनी जल्दी हो दुनिया से हटाकर रास्ता साफ़ करूँ। देखूँ, हैदर बेग ने उधर कहाँ तक काम किया।

शुजाउद्दौला—खड़े-खड़े क्या सोच रहे हो ?

मुर्तज़ा ख़ाँ—सोच रहा हूँ, क्या वे सुनेंगे ? अच्छा देखूँ।

(जाता है)

शुजाउद्दौला—अगर किसी तरह आज की रात बच जाऊँ। शुबहा होता है—लेकिन कोई सबूत नहीं, और सबूत होता भी तो क्या ! कैसे अपनी जान बचाऊँ। नहीं, कोई उम्मीद नहीं।

(बाहर मुर्तज़ा ख़ाँ—नवाब साहब, होशियार !
बाग़ी कोई बात नहीं मानते।)

शुजाउद्दौला—तब—तब—मामूली सिपाहियों की तलवारों के नीचे एक नवाब का सर लोटेगा, उससे बेहतर है वह तलवार जो हमेशा मेरे बदन का बेशक़ीमत जौहर रहा, जिसने सैकड़ों दुश्मनों का ख़ून चाटा, वही तलवार मेरी छाती का ख़ून पीकर अपनी आख़िरी प्यास मिटा ले। बक्सर का मैदाने-जंग फ़ैज़ाबाद के नवाब की क़ब्र हो।

(तलवार निकालकर ख़ुदकुशी करना चाहता है। मर्द के
वेश में बहू बेगम और लौंडी के वेश में
दुराबअली आते हैं।)

बहू बेगम—नवाब साहब, बेवफ़ाई से जो गुनाह आपने किया है, ख़ुदकुशी से नहीं मिट सकता। इन्सानियत कमाने पर मिटेगा। उठिए नवाब साहब, अल्लाह ताला का शुक्रिया अदा कीजिए कि बन्दी काफ़ी रसद और रुपये के साथ ऐन मौक़े पर ख़िदमत में हाज़िर हो सकी।

शुजाउद्दौला—यह कौन? बेगम तुम और इस लिवास में—और यह कौन? क्या मैं ख़्वाब देख रहा हूँ?

बहू बेगम—नहीं हुजूर! ख़्वाब नहीं; ख़ादिमा सचमुच हाज़िर है और मेरे साथ है हमेशा का वफ़ादार खोजा दुराबअली।

शुजाउद्दौला—तुम यहाँ कैसे?

बहू बेगम—सब बातें पीछे सुनिएगा। आपने अमीर बेग को रुपया और रसद भेजने का हुक्म दिया था। मैंने ख़ुफ़िया पता लगाकर मालूम किया, वे सब आपके ख़िलाफ़ बग़ावत का इन्तज़ाम कर रहे हैं। उनकी ख़्वाहिश थी कि आप फ़ैज़ाबाद न लौट सकें। इसलिए मैं ख़ुद' दुराब अली को साथ लेकर मय रुपये और रसद के हाज़िर हुई हूँ।

शुजाउद्दौला—बेगम, क्या तुम वही बेगम हो, जिसे फ़ैज़ाबाद में मुझे एक हब्बा देना भी मंजूर न था।

बहू बेगम—हाँ मालिक! मैं वही हूँ। उस वक़्त इनकार किया था क्योंकि नाजायज़ लड़ाई में शौहर की मदद करना मैंने दीने-इस्लाम के ख़िलाफ़ समझा। और अब ख़ुद आपकी ख़िदमत में मदद लेकर दौड़ आई हूँ; क्योंकि किसी भी हालत में अपने शौहर को बचाना मेरा फ़र्ज़ है। चलिए नवाब साहब, बाग़ियों को ठंडा कीजिए।

—— (सब जाते हैं)

आठवाँ दृश्य

जङ्गल

मीर क़ासिम

मीर क़ासिम—ख़ीमे में रहने की हिम्मत नहीं हुई। न मालूम किस वक़्त कोई मेरा काम तमाम कर दे। जब मुर्शिदाबाद में था, क़िस्मत से एक फ़क़ीर मिला। उसने एक पत्ते का बना हुआ ताज और एक अँगरखा दिखाकर मुझसे पूछा था—"मीर क़ासिम, तुम क्या चाहते हो, नवाबी या फ़क़ीरी ?" मैंने हाथ बढ़ाकर उस ताज को सर पर रखकर कहा था—"नवाबी।" हँसकर फ़क़ीर ने कहा था—"फ़क़ीरी लेते तो अच्छा था।" आज समझ रहा हूँ—फ़क़ीरी लेता तो अच्छा था। कहाँ रही वह बङ्गाल की मसनद ? कहाँ रही बङ्गाल, बिहार, उड़ीसा की सूबेदारी ? कहाँ रहे बाल-बच्चे और बीबी ? फ़क़ीरी—फ़क़ीरी—उस वक़्त नहीं ली और अब ? इस अँधेरे में भी मुझे मानो साफ़ दीख रहा है, वह पत्ते का बना हुआ ताज और वह अँगरखा ! नवाबी या फ़क़ीरी ? फ़क़ीरी या नवाबी ? क्या लूँ ?

(शुजाउद्दौला के दो सिपाही आते हैं)

पहला—ख़ीमे में तो नहीं हैं।

दूसरा—अरे यह तो यहाँ घूम रहा है—मीर क़ासिम !

पहला—नवाबी गई, लेकिन बेशक़ीमती पोशाक देखी है न ! ख़ीमा लूटकर कुछ भी न मिला। इसी शैतान के लिए आज हमारी यह हालत है। छीन ले सब।

दूसरा—चलो—बेचकर फिर कुछ मिलेगा।

पहला—यहाँ अँधेरे में क्यों छिपे हो मिट्ठू—लाओ पगड़ी और अँगरखा उतार दो।

मीर क़ासिम—(तलवार पर हाथ रखकर) कौन है बदमाश !

पहला—(बन्दूक़ उठाकर) तलवार निकाली तो यहीं साफ़ कर दूँगा। लेकिन तू मुसलमान है; तुझे मारूँगा नहीं। तू सीधी तरह पगड़ी और अचकन उतार दे।

मीर क़ासिम—फ़क़ीरी या नवाबी ? मीर क़ासिम ! जान-बूझकर जो नवाबी पगड़ी तुमने सर पर पहनी थी, आज बक्सर के मैदाने-जङ्ग में तुम ख़ुद उसे जान के डर से खोलकर एक ग़ुलाम के हाथ में दोगे ? नहीं, अपने हाथ से बङ्गाल के नवाब की पगड़ी मैं नहीं दे सकता। छीन ले डाकू। बङ्गाल के आख़िरी नवाब की पहचान एक बेवफ़ा हमदीन के हाथ यहीं इस अँधेरे में ख़त्म हो।

दूसरा—अच्छी बात है, मैं छीन लेता हूँ। तू बन्दूक़ को ठीक से पकड़। अगर तलवार पर हाथ रक्खा तो बस धाँय से—।

पहला—ले जल्दी कर।

(सिपाही पगड़ी पर हाथ रखना चाहता है कि फ़ैज़ुल्ला आकर उसे गोली से मार देता है। फ़ैज़ुल्ला के साथ उसके दो सिपाही भी हैं।)

फ़ैज़ुल्ला—बेईमान ! दुनिया शैतान की सल्तनत नहीं है। इसका मालिक ख़ुदा है।

मीर क़ासिम—कौन हो तुम अनजान दोस्त जिसने बदक़िस्मत मीर क़ासिम की जान बचाई ?

फ़ैज़ुल्ला—यह पीछे मालूम होगा। आप जल्द यहाँ से चलिए। अभी आपको मारने के लिए शुजाउद्दौला के सिपाही आ रहे हैं।

मीर क़ासिम—तब फ़क़ीरी नहीं ? अब भी उम्मीद ? अब भी नवाबी का लालच ? चलो दोस्त। तुमने मेरी इज्ज़त बचाई; तुम्हारे ही साथ चलूँगा। शुजाउद्दौला, शुजाउद्दौला ! तुम पर मैंने विश्वास किया था। तुम मुसलमान थे, इसलिए तुम पर मैंने यक़ीन किया। तुमने ख़ूब बदला दिया। तुमको सलाम ! (शुजा के सिपाही को) शैतान का ग़ुलाम ! पगड़ी लेने आया था—नाउम्मीद हुआ क्यों ? पगड़ी नहीं यह जूता ले जा और अपने मालिक को देकर कहना कि उसके माफ़िक़ बेईमान नवाब की क़ीमत पाँच जूती है। (फ़ैज़ुल्ला को) चलो दोस्त—हाथ पकड़ो।

(दोनों जाते हैं।)

दूसरा अङ्क

पहला दृश्य

बरेली—दरबार ख़ास

(हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ, दुन्दी ख़ाँ, नियामत ख़ाँ, सरदार ख़ाँ, फ़ैज़ुल्ला)

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—आप सब को मालूम हो ही गया कि शुजाउद्दौला की मनशा क्या है।

नियामत ख़ाँ सुलह की शर्तों के मुताबिक़ शुजाउद्दौला को अगर चालीस लाख रुपये मिल जायँ तो क्या उसी से वह मान जायगा ?

दुन्दी ख़ाँ—नहीं, उसकी दो शर्तें हैं—रुपये और साथही यह कि मीर क़ासिम को हम अपनी सरहद में जगह न दें।

नियामत ख़ाँ—बहुत मुश्किल सवाल है। छोटा सा रुहेला राज ! शुजाउद्दौला कहीं ज़्यादा ताक़तवर ! मेरी समझ में जहाँ तक आता है कि अगर हम मीर क़ासिम को अपनी सरहद में न रहने दें और रुपये देने में चाहे कुछ देर भी हो तो शायद शुजाउद्दौला हम पर हमला न करे।

दुन्दी ख़ाँ—बहुत मुमकिन है।

नियामत ख़ाँ—इस राज के अव्वल सरदार वलीमुहम्मद की मौत के बाद कई साल सिर्फ़ झगड़ा और लड़ाई में ही गुज़रे हैं। इस वक्त राज में अमन-चैन है। रियाया भी ख़ुश है। और दूसरी बात यह है कि मुहम्मद अली के छः लड़कों में चार अभी तक नाबालिग़ हैं।

सिर्फ़ फ़ैज़ुल्ला और अब्दुल्ला दो बालिग़ हुए हैं। हम लोग सिर्फ़ नाबालिग़ों की तरफ़ से सल्तनत की देख-रेख कर रहे हैं। इन सब बातों पर नज़र रखकर हमारे लिए यह मुनासिब न होगा कि एक बाहरी शख़्स को अपने यहाँ जगह देकर शुजाउद्दौला से जङ्ग ऐलान करें।

सरदार—मुझे इस राय से इत्तफ़ाक़ है।

हाफ़िज़—दुन्दी ख़ाँ, तुम्हारा क्या ख़याल है ?

दुन्दी ख़ाँ—लड़ाई और जङ्ग का हमेशा लगा रहना रियाया और सल्तनत दोनों को नुक़सान पहुँचाता है। फ़िज़ूल की लड़ाई छेड़कर शुजाउद्दौला से दुश्मनी मोल लेना अक़्लमन्दी की बात नहीं। जब मराठों ने हम पर हमला किया था तो शुजाउद्दौला ने हमारी मदद की थी। हम उनके शुक्रगुज़ार हैं। ऐसी हालत में शुजाउद्दौला के ख़िलाफ़ हथियार चलाना हमको मुनासिब नहीं—इसलिए मैं यही बेहतर समझता हूँ कि मीर क़ासिम को यहाँ जगह न दी जाय।

फ़ैज़ुल्ला—लेकिन दादाजान, मैंने उनको पनाह दी है।

नियामत ख़ाँ—आपने नादानी की है। अक़्लमन्दी का काम नहीं किया है। शुजाउद्दौला ने भी उसको पनाह दी थी। उसने जो कुछ भी बर्ताव उसके साथ किया हो, उसका ज़िम्मेदार वही है। हम एक बाहरी शख़्स के लिए बिला मतलब क्यों किसी से दुश्मनी मोल लें ?

फ़ैज़ुल्ला—जिस हालत में मैंने मीर क़ासिम को पनाह दी थी—मुझे यक़ीन है कि आपमें से कोई भी शख़्स अगर वहाँ मौजूद होता तो वही करता जो मैंने किया। क्योंकि किसी इन्सान के लिए यह मुमकिन नहीं कि किसी मुसीबतज़दा को ऐसी हालत में छोड़ दे।

नियामत खाँ—ठीक है; तब इसका नतीजा भी उठाइए।

हाफ़िज़—आप सबकी राय मैंने सुन ली। आपका कहना दुरुस्त है। लेकिन मैं देख रहा हूँ कि फ़ैज़ुल्ला ने भी कोई ग़ैरवाजिब काम नहीं किया है—इसलिए सोच रहा हूँ।

नियामत खाँ—आप चाहे जो कुछ सोचिए, हम शुजाउद्दौला से लड़ाई नहीं मोल ले सकते।

सरदार खाँ—ठीक है, हम क्यों इस झगड़े में पड़ें?

दुन्दी खाँ—मैं भी यही कहता हूँ।

हाफ़िज़—सबकी राय जब यही है तो फ़ैज़ुल्ला तुम क्या समझते हो!

फ़ैज़ुल्ला—सच्चा अर्ज़ करूँ?

दुन्दी खाँ—ज़रूर!

फ़ैज़ुल्ला—आप हमारे नाबालिग़ भाइयों की तरफ़ से उनकी ख़ैरख्वाही देखने के ज़िम्मेदार हैं। इस रुहेलखण्ड में आप लोगों ने सब भाइयों को एक एक हिस्सा दिया है। औला क़िला मेरे हिस्से में है। मैं अब नाबालिग़ नहीं हूँ। आज ही मीर क़ासिम को लेकर मैं अपने क़िले में चला जाता हूँ। अगर शुजाउद्दौला जङ्ग छेड़े तो अकेले मुझसे छेड़ेगा। आप तमाशबीन की तरह बैठे बैठे देखिएगा और उससे कहिएगा कि मैं अकेला उसका बाग़ी हूँ। इस तरह आप अपने को इस जङ्ग से बचा सकते हैं।

नियामत खाँ—सिर्फ़ दिल और अलफ़ाज़ के ज़रिये एक सल्तनत का बचाव नहीं हो सकता। तुम्हारी बातें सुनने में अच्छी हैं, लेकिन इसका नतीजा क्या होगा, मालूम है?

फ़ैज़ुल्ला—आप लोगों की उम्र ज़्यादा हो गई है, नतीजा आप सोचेंगे। मेरे बड़े अब्बा दाऊदखाँ एक मामूली सिपाही की हैसियत से बादशाही पल्टन में भर्ती हुए थे। अगर वे आपकी तरह नतीजा सोचते तो सिर्फ़ पाँच सौ पठान सिपाहियों के ज़रिये इतनी बड़ी सल्तनत क़ायम न कर सकते। और मेरे वालिद शरीफ़ अगर आपकी तरह बैठे बैठे नतीजा सोचते रहते तो आज आपको यहाँ बैठकर नतीजा सोचने का मौक़ा ही न मिलता। मैं नतीजा सोचना नहीं चाहता। मैं चाहता हूँ जिसको जो ज़बान दी है, उसे निबाहूँगा। अगर सारा हिन्दुस्तान मेरे ख़िलाफ़ खड़ा हो, जब तक जान रहेगी मीर क़ासिम मेरे क़िले में ज़िन्दा रहेगा।

नियामत ख़ाँ—ग़रज़ यह कि तुम हमसे भी दुश्मनी करना चाहते हो।

फ़ैज़ुल्ला—अगर इसके लिए आप मुझसे दुश्मनी करें, मैं लाचार हूँ।

(मीर क़ासिम आता है)

मीर क़ासिम—लेकिन मेरे बहादुर अज़ीज़, मैं तैयार नहीं हूँ। मैंने सब बातें सुनी हैं। सुनकर ख़ुशी और ताज्जुब से हैरान हूँ। काश बङ्गाल में एक भी सच्चा मुसलमान, तुम्हारे जैसा दिलवाला—दीन और ईमान का पक्का मुझे मिल जाता तो बङ्गाल की तवारीख़ आज दूसरी तरह से लिखी जाती। मैंने बहुत कुछ बरदाश्त किया है और सह रहा हूँ। अपनी क़िस्मत से लड़ते लड़ते मैं शिकस्त की आख़री हद पर पहुँच गया हूँ। लेकिन अपनी इस बदक़िस्मती के साथ मैं अब दूसरे किसी की क़िस्मत को बाँधना नहीं चाहता। तुम्हारे ज़ेरेसाया रहना मुझे मंजूर नहीं। तुमने बक्सर के मैदान में मेरी इज़्ज़त बचाई है, वही कम नहीं।

मैं अपनी ख़ुशी से रुहेलखण्ड इलाके के बाहर चला जाता हूँ। मुझे रुख़सत होने की इजाज़त दो। ख़ुदा तुम्हें सलामत रक्खे।

दुन्दी ख़ाँ—अच्छी बात है। फ़ैज़ुल्ला, अब तो तुम्हें कुछ कहना नहीं है न?

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—लेकिन मुझे उज्र है।

नियामत ख़ाँ—फ़रमाइए।

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—इस सल्तनत के वज़ीरे आज़म की हैसियत से मैं तुमको हुक्म देता हूँ फ़ैज़ुल्ला कि तुम इस नौजवान को औला क़िले में क़ैद रक्खो। जब तक शुजाउद्दौला से हमारी लड़ाई ख़त्म न होगी तब तक इसको क़िले से बाहर जाने की इजाज़त नहीं। अगर शुजाउद्दौला का फ़रमान आने के पहले मीर क़ासिम साहब चले जाते तो हम कुछ न कहते; लेकिन शुजाउद्दौला हमको लाल आँखें दिखाकर डरायगा। हम इसको बरदाश्त न करेंगे। अगर रुहेलखण्ड इसके लिए ख़तम हो जाय, परवा नहीं। चलो फ़ैज़ुल्ला, मैं तुम्हारे साथ हूँ। बाक़ी वज़ीर-साहबान शुजाउद्दौला से सुलह कर औला क़िला छोड़कर बाक़ी रुहेलखण्ड को बचाने की तदबीर कर सकते हैं।

फ़ैज़ुल्ला—(मीर क़ासिम से) मीर क़ासिम, आप मेरे क़ैदी हैं। चलिए औला क़िला की ओर।

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—जाओ, कोई शुजाउद्दौला के आदमी को बुला लाओ।

दुन्दी ख़ाँ—भाई साहब, अब भी सोचिए।

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—अब सोचने की फ़ुर्सत नहीं।

(शुजाउद्दौला का दूत आता है)

हाँ, तुम शुजाउद्दौला को यह ख़बर दे सकते हो कि हाफ़िज़ रहमत ने मीर क़ासिम को औला क़िला में पनाह दी है। अगर उनसे बन पड़े तो वे औला क़िला पर हमला करें। दूसरे रुहेला सर्दारों को उनसे कोई दुश्मनी नहीं। औला क़िला का सरदार है फ़ैज़ुल्ला और मैं हूँ उसका फ़ौजदार।

दूत—मैं आपका फ़र्मान पेश करूँगा।

दुन्दी खाँ—नहीं, ठहरो। रुहेला सरदारों की नाइत्तिफ़ाक़ी कभी घर के बाहर नहीं जाती। मैदानेजङ्ग में रुहेले एक दूसरे से नाइत्तफ़ाक़ी नहीं कर सकते। तुम जाकर शुजाउद्दौला से कह सकते हो कि रुहेलखण्ड की सल्तनत मीर क़ासिम को ज़रूर पनाह देगी।

नियामत खाँ—हाँ, जब हाफ़िज़ रहमत को हमने एक दफ़े अपना अव्वल बनाया है तो उनकी बात हमें माननी ही होगी। हम शुजाउद्दौला से तलवार के साथ मुलाक़ात करेंगे, मैदानेजङ्ग में।

(दूत जाता है)

नियामत खाँ—इसी वक़्त सारे रुहेलखंड में ऐलान कर दिया जाय कि सोलह साल की उम्र से लेकर साठ साल की उम्र तक का हर एक शख़्स लड़ाई के लिए तैयार हो।

हाफ़िज़ रहमत खाँ—हाँ, ऐसा ऐलान करना मुझे मंज़ूर है; लेकिन मेरी एक अर्ज़ यह है कि कम से कम एक शख़्स ८० साल की उम्र का भी इस लड़ाई में जाने की इजाज़त हासिल कर सके। बहुत दिनों तक इस हाथ ने तलवार नहीं पकड़ी है। ज़िन्दगी की आख़री सरहद पर

खड़े होकर सामने मग़रिब—पैरों के नीचे गरम ख़ून का दरिया—बहादुर सिपाहियों के नारों को सुनते हुए और इस्लाम ज़िन्दाबाद कहते हुए मैं अपनी आख़िरी नमाज़ दुश्मनों की लाशों से बनी हुई मसजिद की दीवार के अन्दर पढ़ सकूँ।

सब—इसलाम ज़िन्दाबाद।

फ़ैज़ुल्ला ख़ाँ—दादा जान, आप इस जङ्ग में फ़ौजदार हैं, और हम हैं हुक्म तामील करनेवाले सिपाही।

सब—हमें इस राय से इत्तफ़ाक़ है।

मीर क़ासिम—मेरे लिए क्या हुक्म है?

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—फ़ैज़ुल्ला ने तुमको भाई कहकर पनाह दी है; जब तुम फ़ैज़ुल्ला के भाई हो तो हम सब के भाई हो। तुम आज सारे रुहेलखण्ड के मेहरबान मेहमान हो। पनाह दिये हुए शख़्स को दुश्मन के डर से छोड़ देना दीने-इस्लाम के ख़िलाफ़ है। इसी लिए मैंने शुजा-उद्दौला की लाल आँखों की परवा नहीं की और अपनी जान से भी प्यारे दोस्तों की राय को मंज़ूर नहीं किया। तुम्हें कुछ भी करना नहीं होगा। तुम सिर्फ़ एक गवाह की तरह रुहेलों की बहादुरी को देखो और मेरे कलेजे के ख़ून से भी प्यारे अज़ीज़ो, तुमसे नाइत्तफ़ाक़ होकर मैंने जङ्ग छेड़ा है, इसके लिए मुझे माफ़ करना। दोस्तो, इस दुनिया में ज़र, दौलत कोई चीज़ नहीं, एक दफ़े जाने पर, फिर भी मिल सकती है, लेकिन ईमान अगर एक दफ़े चला जाय तो फिर वापस नहीं आता।

——

दूसरा दृश्य

फ़ैज़ाबाद—कमरा

[वक़्त रात—गुलनार, बहार और अज़ीमन सो रहे हैं ।]

गुलनार—सो रहे हैं, अपनी हालत कुछ नहीं समझते। हँसते हैं, खेलते हैं, कभी कभी पूछते हैं कि "अब्बाजान कहाँ हैं"। नवाब की साहबज़ादी, नवाब की बेगम—क्या पहले भी कभी ऐसी मुसीबत में गिरफ़्तार हुई हैं? मरने के लिए तैयार बैठी हूँ, लेकिन मौत आती कहाँ है? चारों ओर पहरा, भागने का भी कोई रास्ता नहीं। क्या सचमुच मरूँगी? लेकिन उनकी चीज़ें उनको वापस दिये बिना मरूँ भी कैसे? पर इस दोज़ख़ के अन्दर जीना भी हराम हो रहा है। या ख़ुदा, परवरदिगार! क्या करोड़ों औरतों और मर्दों में से मुझे ही यह सज़ा देनी मंज़ूर थी?

(बहू बेगम आती हैं)

बहू बेगम—बहन, तीन दिन हो गये; और कितने दिन इस तरह से रहोगी? अब तो मुझसे भी देखा नहीं जाता। कुछ तो खाओ।

गुलनार—बहन-जान! मैंने आपसे बराबर अर्ज़ की है, इस दोज़ख़ में मैं एक बूँद पानी भी नहीं पी सकती। आप बहिश्त की हूर हैं, इन्सान से कहीं ऊपर, आपसे मुझे कोई नाराज़ी नहीं। लेकिन आपके शौहर, जिन्होंने मेरे शौहर को पनाह देकर धोखा दिया और आज चूँकि रुहेलों ने उनको पनाह दी है, वे उनका ख़ून पीने दौड़ रहे हैं। ऐसी हालत में, मैं जान-बूझकर अपने शौहर के दुश्मन के घर कैसे पानी पी

सकती हूँ ? अगर आप मेरी कुछ भी भलाई कर सकती हैं तो किसी तरह हमारे छुटकारे का इन्तज़ाम कर दीजिए। मैं इस दोज़ख के बाहर जाकर आराम की साँस लूँ।

बहू बेगम—रोज़ वही एक ही बात। तुमको अकेली छोड़ देना भी गुनाह है और यहाँ रखना भी। समझ में नहीं आता, क्या करूँ। जाओगी कहाँ ? नवाब की बेगम होकर—दो छोटे बच्चों का हाथ पकड़कर यतीमों की तरह गन्दे रास्तों पर भटकोगी तुम, और मैं रङ्गमहल की खिड़की से वह नज़ारा देखूँगी ! और इन सब गुनाहों के लिए ज़िम्मेदार हैं मेरे शौहर ! मालूम नहीं, कौन ज़्यादा बदक़िस्मत है—तुम या मैं ? लेकिन सचमुच इसमें मेरा क़ुसूर नहीं।

गुलनार—क़ुसूर मेरी क़िस्मत का है।

बहू बेगम—दोनों की क़िस्मत का। क्यों मैं नवाब की बेगम हुई ? क्यों मैं औरत हुई ? कौन से गुनाह की यह सज़ा है ? क्यों मैं ग़रीब न हुई !

गुलनार—आपको अफ़सोस करने की कोई ज़रूरत नहीं। आप हमें रास्ता बता दीजिए। हम पर रहम कीजिए—मरते वक़्त खुली हवा में मरने दीजिए। इन दो बच्चों का हाथ पकड़कर, मैं इन्हें इनके वालिद के दुश्मन के घर से बाहर निकाल दूँ तो सचमुच वालदा का फ़र्ज़ अदा करूँगी।

बहू बेगम—तुम्हारी जैसी मरज़ी—मैं तुमको मना न करूँगी। नवाबी न रहने पर भी तुम सचमुच नवाब की बेगम हो ! और मैं रङ्गमहल में रहने पर भी एक भिखारिन से भी बदतर हूँ। मैं

क़ुबूल करती हूँ अगर दुनिया के सारे शैतान भी एक साथ तुम्हारे ख़िलाफ़ हों तो भी तुम्हारी अस्मत की शान के सामने उनको सर झुकाना पड़ेगा। लेकिन अगर इस घर में नहीं तो घर के बाहर जाकर भी क्या तुम मेरी कोई मदद मंज़ूर न करोगी ?

गुलनार—अगर आप मुझे यहाँ से निकल जाने का रास्ता दिखा दें तो वह मदद कुछ कम न होगी। इसके अलावा और किसी मदद की मुझे ज़रूरत नहीं।

बहू बेगम—मैं अपने शौहर की मरज़ी के ख़िलाफ़ तुम्हें छोड़ देती हूँ। पहरेदार तुमको न रोकें, इसका इन्तज़ाम मैं कर आती हूँ। (जाती है)

गुलनार—गहरी नींद में सो रहे हैं! नींद से उठाकर, इनके आराम में ख़लल डाल कर, मैं रास्ते में जाकर खड़ी हूँगी। या अल्लाह, तुम्हारी मरज़ी! बहार! बहार! बेटा!

बहार—अम्मीजान!

गुलनार—उठो, अभी हमें यहाँ से जाना होगा।

बहार—कहाँ अम्मीजान, क्या अब्बाजान के पास ?

गुलनार—हाँ, इरादा तो वही है।

बहार—तो अज़ीमन भाई को जगाऊँ ? अज़ीमन, अज़ीमन उठो!

अज़ीमन—कौन भाईजान—अम्माजान कहाँ हैं ?

बहार—यहीं हैं। चलो, हम अब्बाजान के पास चल रहे हैं।

अज़ीमन—अब्बाजान के पास ? क्यों अम्मीजान—सचमुच ? क्या सचमुच हम अब्बाजान के पास चलेंगे ? अभी तो बहुत रात है। अब्बाजान कहाँ पर हैं ?

गुलनार—चलो बेटा।

अज़ीमन—अब्बाजान कहाँ हैं ?

गुलनार—बहुत दूर।

अज़ीमन—तब जल्दी चलो। कैसे चलेंगे ? क्या हाथी पर ?

गुलनार—वे दिन चले गये। हाथी नहीं, पैदल ही जायँगे बेटा !

बहार—अज़ीमन भाई को मैं कन्धे पर उठा लूँगा, अम्माजान !

गुलनार—(स्वगत) जब तक छोटे रहते हैं तब तक भाई भाई को छाती पर रखता है; जब बड़े होते हैं तब वह भाई उस भाई की उसी छाती में छुरी भोंकने में भी नहीं हिचकता ! यही दुनिया का तमाशा है। (प्रकट) हाँ बेटा, जब वह थक जाय तब हम दोनों पारी-पारी से ऐसा ही करेंगे।

अज़ीमन—मैं कभी नहीं थकूँगा ! आप देख लेना। मैं आगे आगे जाऊँगा।

गुलनार—नहीं, तुम दोनों मेरा हाथ पकड़ो। या अल्लाह—ग़रीब-निवाज़ ! इस दोज़ख़ की सरहद के बाहर मुझको बेख़तरे निकाल कर ले चल !

(तीनों जाते हैं)

(बहू बेगम आती हैं)

बहू बेगम—चली गई; मेरे हुक्म से पहरेदार रोकेंगे नहीं। मैं—मैं—अवध की बेगम और बङ्गाल की मसनद की निकाली हुई बदक़िस्मत बेगम ! दुराब अली, दुराब अली !

(दुराब अली आता है)

दुराब अली—गुलाम हाज़िर है, बेगम साहबा !

बहू बेगम—इतनी रात को नींद से उठाकर तुम्हें क्यों बुलाया है, जानते हो ?

दुराब अली—क्या हुक्म है, हुज़ूर ?

बहू बेगम—वह देखो, वह जो दो छोटे बच्चों का हाथ पकड़े साफ़ और सुफ़ेद बुरक़ा ओढ़कर और उससे भी सुफ़ेद और साफ़ तबीयत की मालकिन, इस रात के अँधेरे में, फ़ैज़ाबाद रंगमहल के आँगन को नफ़रत के साथ क़दमों के नीचे कुचलती हुई चली जा रही है, जानते हो वह कौन है ?

दुराब अली—कौन है, हुज़ूर ?

बहू बेगम—फ़ैज़ाबाद-सल्तनत की तक़दीर, जो इस महल के अन्दर पनाह लेकर आई थी और हमारी बेवफ़ाई के सबब हमारी हज़ार मिन्नतों को ठुकराकर चली जा रही है। दुराब अली, तुम अभी उस पाक बेगम का पीछा करो। तीन रोज़ से उसने कुछ नहीं खाया है। अपने शौहर के दुश्मन के घर एक बूँद पानी भी उसने नहीं पिया। बाहर जाते जाते कौन कह सकता है, शायद अभी ज़मीन पर गिरकर हमेशा के लिए सो जाय। तुम जाओ। देखो अगर किसी तरह उसको बचा सको। इस ख़ून के गुनाह से मुझे बचाओ।

दुराब अली—मैं अभी जाता हूँ।

बहू बेगम—छिपकर पीछा करना। अपना राज़ न खोलना। अगर वह जान जायगी कि तुम नवाब के मुलाज़िम हो तो तुम्हारी मदद वह क़बूल न करेगी। किसी क़दर बदक़िस्मत को उसके शौहर के पास पहुँचा देना। साथ में पानी और खाना ले जाओ। तीन रोज़ से

उसने खाया नहीं है। मैं भी तीन रोज़ से रोजे में हूँ। अगर वह बदक़िस्मत खाये बिना मर गई तो यह भी जान लेना कि मुझे कोई नहीं बचा सकेगा। इस गुनाह को याद रखते हुए जीता रहना कितना तकलीफ़देह है, यह सिवा तुम्हारे और कोई नहीं समझेगा। जिस वक़्त तुम्हारी उम्र पाँच साल की थी, मैंने तुम्हें औलाद समझकर पनाह दी। तुम हिन्दू के लड़के थे, तुम्हारे अनजान में तुम्हें मुसलमान बनाकर मैंने तुम्हें औलाद की तरह पाला। आज अपना फ़र्ज़ अदा करो; मुझे बचाओ!

दुराब अली—ऐसा ही होगा अम्मा साहबा!

(दोनों जाते हैं)

——

तीसरा दृश्य

ख़ीमा

[हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ और .फैज़ुल्ला]

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—किसने ऐसी बेईमानी की? हमारे पहुँचने के पेश्तर वज़ीर की .फौज किस तरह गङ्गा के पार पहुँच गई? ज़रूर हमारे .खुफ़िया मशविरा को सुनने के बाद किसी ने इधर ख़बर दे दी है। अगर बिला कोई ख़बर हासिल किये हुए ही शुजाउद्दौला की फ़ौज ने गङ्गा के पार पहुँचकर डेरा डाला हो तो, कहना पड़ेगा, वह हमसे भी होशियार फ़ौजदार है। और अगर किसी की बेईमानी का यह नतीजा है तो समझना पड़ेगा कि .खुदा नाराज़ है।

फ़ैज़ुल्ला—आप क्यों फ़िक्र कर रहे हैं ? हम ज़रूर फ़तह पायेंगे। दुश्मन तोपों का रुख़ बाँई तरफ़ घुमाकर ज्यों ही उधर का हमला रोकने की कोशिश करेगा त्यों ही दाहिनी तरफ़ से मैं उस पर हमला कर दूँगा। दोनों तरफ़ से घिर जाने पर वह ज़्यादा देर टिक न सकेगा।

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—जान की परवा बिना किये हम लड़ेंगे तो ज़रूर ; उसके बाद नतीजे का मालिक अल्लाह है। हम लड़ रहे हैं ईमान के लिए—ख़ुदा ज़रूर हम पर मेहरबान होंगे।

फ़ैज़ुल्ला—इन्शा अल्लाह! पैग़म्बर का हुक्म है कि सब कुछ देकर भी लाचार और मुसीबतज़दा को पनाह दो। हम उसी पाक हुक्म की तामील कर रहे हैं तब क्यों हमारी हार होगी ?

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—क़ुरान शरीफ़ में लिखा है कि अल्लाह की मरज़ी समझना इन्सान की ताक़त के बाहर है। क्या मीर क़ासिम को औला क़िला पर भेज दिया !

फ़ैज़ुल्ला—नहीं, वे नहीं गये। लड़ाई ख़त्म न होने तक वे यहीं रहेंगे। उनकी ख़्वाहिश है कि वे भी लड़ाई में हाथ बटायें।

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—बदक़िस्मत नवाब! उसकी बीबी और बच्चे उसी के दुश्मन शुजाउद्दौला के घर पर। सुना है, शुजाउद्दौला ने ऐलान किया है कि जो मीर क़ासिम को गिरफ़्तार करके उसके सामने पेश कर सकेगा वह दस लाख रुपये इनाम पायेगा।

फ़ैज़ुल्ला—मीर क़ासिम पर नाराज़गी की उसकी कोई जायज़ वजह नहीं रह सकती। उसने अपनी ख़ुशी से पनाह दी थी और अपनी ख़ुशी से ही उसकी तरफ़ से ऐलाने जङ्ग किया था।

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—ऐसे शख़्सों की दुश्मनी जितनी ख़राब होती है, दोस्ती भी उतनी ही! सुना है, शुजाउद्दौला ने मीर जाफ़र के साथ एक सुलह की है। अब मीर जाफ़र को हाथ में रखने के लिए वह मीर क़ासिम से दुश्मनी करेगा इसमें ताज्जुब की कोई बात नहीं।

फ़ैज़ुल्ला—अगर आपकी इजाज़त हो तो मैं लड़ाई के लिए रवाना हो जाऊँ?

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—इन्शा-अल्लाह, ख़ुदा का नाम लेकर तुम आगे बढ़ो; लेकिन जाने के पेश्तर मेरी एक बात सुनते जाओ। नवाब शुजाउद्दौला बहुत ही ज़ालिम है। अगर तुम यह देखो कि इस लड़ाई में हमारी हार होगी, अगर इस लड़ाई में मैं मर गया तो तुम मैदान छोड़कर सबसे पहले शहर में जाना। औरतों को औला क़िला में भेज देना, जिससे वे उसके हाथ क़ैद न हों, इसका इन्तज़ाम करना।

फ़ैज़ुल्ला—मैं लड़ाई का मैदान छोड़कर चला जाऊँगा!

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ—हाँ, पठानों की औरतें, जिनका मुँह कभी आफ़ताब और चाँद ने भी नहीं देखा, वे मीर क़ासिम की बेगम की तरह शुजाउद्दौला के रङ्गमहल में क़ैद होकर रहेंगी, इससे ज़्यादा तौहीनी और क्या हो सकती है! अच्छा, अब तुम आगे बढ़ो। अपनी फ़ौज के साथ मुझसे आकर मिल जाना।

(सूबेदार आता है)

सूबेदार—घोड़ा तैयार है।

हाफ़िज़०—चलो हम भी तैयार हैं। (सब जाते हैं)

——

चौथा दृश्य

शुजाउद्दौला का खीमा—दूर पर मैदान।

(शुजाउद्दौला और लताफ़त अली)

शुजाउद्दौला—लताफ़त अली, बहुत अच्छे वक्त पर हम गङ्गा के पार आ गये हैं। अगर हमारे आने के पेश्तर दुश्मन इस जगह पर आ डटते तो आज की लड़ाई में ज़रूर हमारी हार होती।

लताफ़त अली—हम तो रात में गङ्गा के पार आने में हिचक रहे थे। ख़ुफ़िया जाकर हाफ़िज़ के हिन्दू दीवान के पास से ख़बर ले आया कि रुहेलों की मन्शा रात ही को यहाँ फ़ौज इकट्ठी करने की है।

शुजाउद्दौला—यह ठीक है। अगर इस लड़ाई में हमारी जीत हुई तो वह उस हिन्दू दीवान के लिए ही होगी। मैंने पहले से ही उसे बहुत सी दौलत और लालच देकर अपने हाथ कर लिया था और बहुत सी वजहों से वह हाफ़िज़ पर नाराज़ भी है।

लताफ़त अली—रुहेले हमारी फ़ौज के बाईं तरफ़ से हमला करने के लिए बढ़ रहे हैं। मैं अपनी फ़ौज को होशियार करने के बाद आपको ख़बर देने आया।

(सिपाही एक मुसलमान फ़क़ीर को लेकर आता है)

सिपाही—हुज़ूर, यह शख्स फ़क़ीरी लिबास में आपके ख़ीमे की तरफ़ आ रहा था। मुझको शक हुआ। मैंने इसे मना किया तो सुना नहीं। इसलिए क़ैद कर लाया।

शुजाउद्दौला—कौन हैं ये ?

लताफ़त अली—तुम कौन हो? इस खीमे से एक कोस पर लड़ाई हो रही है; इस वक़्त तुम यहाँ कैसे और क्योंकर आये?

फ़क़ीर—जी, आपसे मिलने के लिए ही आ रहा था।

शुजाउद्दौला—किस ज़रूरत से?

फ़क़ीर—बहुत सख्त ज़रूरत से। लेकिन वह बात हर किसी के सामने कही नहीं जा सकती। (लताफ़त को) आप सेनापति हैं, आपके रहने में हानि नहीं, परन्तु हुज़ूर इस सिपाही को यहाँ से जाने को कह दीजिए।

लताफ़त अली—तुम्हारा मतलब क्या है? तुम दुश्मन के ख़ुफ़िया नहीं हो—इसका सुबूत?

फ़क़ीर—विश्वास-योग्य प्रमाण मैं दूँगा। और अगर मैं शत्रु भी हूँ तो इस साधारण सिपाही का यहाँ रहना न रहना बराबर है। मैं अकेला हूँ, हाथ में हथियार नहीं—अगर मैं शत्रु हुआ तो आसानी से आप मुझे क़ैद कर सकेंगे।

लताफ़त अली—क्या हुक्म है?

शुजाउद्दौला—(सिपाही से) तुम जा सकते हो।

(सिपाही चला जाता है)

लताफ़त अली—बोलो, क्या कहना चाहते हो?

फ़क़ीर—पहले तो मैं प्रमाण देता हूँ कि मैं आपका विश्वासी हूँ।

(लताफ़त के हाथ में अँगूठी देता है, वे उसे शुजा को दिखाते हैं।)

शुलाउद्दौला—यह क्या! यह तो मेरी मुहर की अँगूठी है, तुम्हें कहाँ मिली?

फ़क़ीर—आपके ख़ुफ़िया के पास। जिस ख़ुफ़िया के द्वारा मैंने आपको गङ्गा पार होने का परामर्श दिया था, उसी ने मुझे आपका पत्र और अँगूठी दी थी। मैं ही हाफ़िज़ रहमत का दीवान हूँ।

शुजाउद्दौला—तुम ? वह तो हिन्दू है।

फ़क़ीर—जी, मैं भी हिन्दू हूँ (नक़ली दाढ़ी खोल लेता है), भेस बदलकर आया हूँ, नहीं तो पकड़े जाने का भय था। फिर नगर को इसी भेस में लौट जाऊँगा। एक आवश्यक संवाद देने के लिए आया हूँ। यहाँ से डेढ़ कोस की दूरी पर एक पहाड़ी जङ्गल में फ़ैज़ुल्ला तीन हज़ार पठान सेना के साथ छिपा है। बाईं ओर से जब हाफ़िज़ रहमत आप पर आक्रमण करेंगे उस समय एकाएक फ़ैज़ुल्ला छिपी हुई सेना लेकर पूरब की तरफ़ से आक्रमण करेगा। छिपकर मैंने रुहेलों के युद्ध का नक़शा जहाँ तक मालूम किया है, आपसे कह दिया। अब आप अपना कर्तव्य आवश्यकतानुसार स्थिर कर सकते हैं।

शुजाउद्दौला—तुमको पहले कभी देखा नहीं है, लेकिन अपने ख़ुफ़िया के ज़रिये मुझे तुम्हारी तारीफ़ मालूम हो गई है। तुम बहुत अक्लमन्द हो। तुमने कल जो ख़बर दी थी वह बेशक़ीमती थी, लताफ़त अली, जो ख़ुफ़िया कल राय साहब के पास ख़त लेकर गया था वह बग़लवाले ख़ीमे में है, उसे हाज़िर करो।

लताफ़त अली—जो इरशाद ! कोई है ? हबूरमत।

शुजाउद्दौला—क्या तुम अभी वापस जाओगे या लड़ाई ख़तम न होने तक यहीं रहोगे ?

फ़क़ीर—जी, मैं लौट जाऊँगा। काम बहुत अधिक है।

(ख़ुफ़िया आता है)

ख़ुफ़िया—इरशाद, जनाब !

शुजाउद्दौला—इनको पहचानते हो ?

ख़ुफ़िया—जी हाँ हुजूर ! आप व्यास राय हैं, हाफ़िज़ रहमत के दीवान. सलाम राय साहब !

फ़क़ीर—सलाम ।

शुजाउद्दौला—अच्छा तुम जा सकते हो ।

(ख़ुफ़िया चला जाता है)

फ़क़ीर—नवाब बहादुर की अगर आज्ञा हो तो मैं भी अब चलूँ । चारों तरफ़ गोले गोलियाँ ! अगर भगवान् की दया से पार पहुँच गया, तभी कुशल है । मेरे ही हाथ रहमत साहब के ख़ज़ाने की कुंजी है । ख़ज़ाने के गुप्त रास्ते मुझे सब मालूम हैं । जब आप मकान लूटें, तो मुझे बुला लीजिएगा । मेरे बिना रहमत साहब का काम एक दिन भी नहीं चलता, ऐसे ही आपको मेरी सहायता की आवश्यकता होगी । हिसाब के काग़ज़-पत्तर सब मेरे पास हैं । मैं सब समझा दूँगा, लेकिन हुज़ूर मुझको कहीं भूल न जायँ ।

शुजाउद्दौला—तोबा तोबा । तुमको मैं कभी नहीं भूलूँगा । तुम्हारी दोस्ती मुझे हमेशा याद रहेगी ।

फ़क़ीर—हुज़ूर, मेरी और कोई बिनती नहीं है, केवल कुतूहर राज्य का इजारा मुझे दे दिया जाय । मैं आपको सालाना दो करोड़ रुपया नज़र करूँगा । सब आपका ही रहेगा । मैं तो केवल काग़ज़-पत्तर लेकर रहूँगा ।

शुजाउद्दौला—ऐसा ही होगा।

फ़क़ीर—कोठी लूटेंगे, धन-दौलत सब फ़ैजाबाद के ख़ज़ाने में जाकर जमा होगी। और रहमत की एक सुन्दर पोती है, यदि उसको आप बन्दी कर ले जायँ तो किसी अच्छे पात्र के साथ उसका विवाह कर दीजिएगा। अच्छा, तो अब मुझे आज्ञा दो, सलाम! (लताफ़त को) ख़ाँ साहब, यदि कुछ आपत्ति न हो तो दाढ़ी को लगाकर निकलूँ। क्या जाने, शायद कोई पहचान ले! ठीक है न?

(दाढ़ी को पहनकर जाता है)

शुजाउद्दौला—लताफ़त अली, मालूम होता है, ख़ुदा मेहरबान है। अब इस लड़ाई में हमारी हार नहीं हो सकती। लेकिन यह शख़्स है कैसा—अपने मालिक की जो बरबादी यह कर रहा है, वह तो है ही, साथ ही अपने मज़हब तक की परवा न कर आसानी के साथ मुसलमानी डाढ़ी पहनने में भी हिचका नहीं।

लताफ़त अली—हुज़ूर, लालच बुरी चीज़ है। इसके क़ाबू में होकर इन्सान दीन-दुनिया किसी की परवा नहीं करता।

शुजाउद्दौला—ठीक है। तुम चलो और फ़ौज को ठीक तरह सजाओ। मैं ख़ुद फ़ैज़ुल्ला की तरफ़ रवाना होता हूँ।

(दोनों जाते हैं)



पाँचवां दृश्य

बरेली—दीवान की कोठी

गुजारी

गुजारी—किस जलमुहे ने ऐसा शास्त्र बनाया था कि पतिदेव के भोजन करने के पहले स्त्रीदेवी भूखी बैठी रहेंगी ? दिन के तीन पहर बीत गये। अभी तक पति महाराज के दर्शन नहीं, और मैं बैठी-बैठी भूखी मरूँ। पिछली रात को उठकर चले गये—शहर के बाहर हो रही है लड़ाई। गोलों की आवाज़ से जी धक-धक कर रहा है। कहा—जल्दी-जल्दी घर लौटो, खा-पीकर दरवाज़ा बन्द कर दें, देखो न ! ऐसी दीवान की नौकरी के मुँह पर सौ झाड़ू।

(नौकरनी आती है)

नौकरनी—माईजी, माईजी, जल्दी से छिप जाओ, घर में मुसलमान घुसा है।

गुजारी—मुसलमान घुसा है ! अरी कहती क्या है; बावली हो गई है क्या ?

नौकरनी—अरे हाँ हाँ, सो भी एकदम चौके में।

गुजारी—चौके में, एं, हाय रे राम !

नौकरनी—हाँ माईजी चौके में, एकदम हँड़िया के अन्दर।

गुजारी—हँड़िया के अन्दर ! हाय सत्यानास, हँड़िया !

नौकरनी—अरे हाँ हाँ, चौके में घुसकर एक चाँटा महाराज के गाल में मारा और हाथ से करछुली छीनकर दाल की हँड़िया में लगा घटर घटर करने। मलेच्छ ने सब ख़राब कर दिया।

गुजारी—हाय भगवान्! ड्योढ़ी पर के दरबान नौकर सोते हैं क्या?

नौकरनी—दरबान नौकर कहाँ से आयें? सब मरद तो लड़ाई में भेज दिये गये हैं।

गुजारी—तब तो बड़ा ग़ज़ब हुआ। अच्छा देखो तो जलमुँहे दीवान की अक़िल। इस वक़्त भी कोई घर से बाहर रहता है। अरी ठीक कहती है सचमुच मुसलमान है?

नौकरनी—झूठ बोलूँ तो पकौड़ा की क़सम। इतनी लम्बी दाढ़ी, प्याज़ और लहसुन की बदबू से सामने खड़ा होना मुश्किल है।

गुजारी—अन्दर घुस आया, और तूने कुछ कहा नहीं?

नौकरनी—मैं मरूँ अपनी जान के डर। तुम्हीं कहो न। वह, वह आ रहा है राँड़ का भतार!

(फ़क़ीरी लिबास में दीवान आता है)

दीवान—अरी सब गई कहाँ?

नौकरनी—हाय मैया!

गुजारी—अरे सचमुच मुसल्ला ही तो है—तू कौन है रे जलमुँहा? बात न चीत, भले आदमी के घर में घुस आया। मतवाला है या पगला?

दीवान—मर मुँहजली, तुम लोगों को हुआ क्या? महाराज मुझे देखते ही भाग गया। नौकरनी चिल्लाकर चल दी—तू कहती है मतवाला,

कहाँ तो थका माँदा घर आया, ज़रा हाथ-पैर धुलायेगी, पङ्खा झलेगी। लगी चिल्लाने।

गुजारी—लगी चिल्लाने—निकल यहाँ से—औरत हैं तो क्या, तूने समझा क्या है?

नौकरनी—समझा क्या है? (स्वगत) मार झाड़ू अभी सीधा कर दूँगी। दीवान साहब तक को सीधा कर दिया, तू है ही किस खेत की मूली?

दीवान—अरी प्यारी, यह तुम क्या कह रही हो?

गुजारी—क्या प्यारी! हूँ—अरी ला तो ज़रा हँसिया, हरामज़ादे की नाक काट लूँगी।

दीवान—क्या, इतनी हिम्मत, नौकरनी के सामने मेरा अपमान। रात को अँधेरे में जब कोई देखता-सुनता नहीं जो कहो न कहो, कुछ कहता नहीं हूँ। अब दिन दोपहर तुम नाक काटोगी, अभी तुझे गरदन पकड़कर निकाल दूँगा। मेरे सर में आग जल रही है।

गुजारी—अभी तेरी आग बुझाये देती हूँ। (नौकरनी से) देख, तू खड़ी रह ज़रा, कहीं भाग न जाये। मैं लाती हूँ भुजाली।

नौकरनी—संडा-मुसंडा साँड़ सरीखा मरद, मैं अकेली कैसे सँभालूँगी!

गुजारी—कैसे सँभालेगी? हरामी के पिल्ले की डाढ़ी पकड़कर खड़ी रह।

दीवान—ख़बरदार, मार दूँगा चाँटा।

नौकरनी—हह—चाँटा, देखूँ तो ज़रा कैसे मारता है। (दाढ़ी पकड़ लेती है।) हाय अम्मा, यह क्या! (डाढ़ी खुल जाती है)

गुजारी—अरे, यह कौन तुम ?

दीवान—जी हाँ मैं, अब खुलो आँखें ?

नौकरनी—हाय रे दय्या ! कैसी शरम की बात है। मालिक के एक रोज़ के अन्दर इतनी लम्बी डाढ़ी कैसे उग आई ?

दीवान—(स्वगत) ओह ! एकदम ख़याल नहीं, डाढ़ी की बात भूल ही गया था। (प्रकट) तू जा, खड़ी-खड़ी देखती क्या है ?

नौकरनी—हाँ जाऊँ, डाढ़ी छूनी पड़ी। जाकर दो घड़े पानी सर पर डाल लूँ। (जाती है)

गुजारी—यह सब है क्या मामला ?

दीवान—हैं, हैं, प्यारी ! चुप-चुप, जो चाल चली है, एकदम शतरंज की चाल। अगर लग जाय तो एक क़िस्त में मात। मुसलमानी वेश में गया था शुजाउद्दौला के पास—घर आकर डाढ़ी खोलना भूल गया।

गुजारी—तो डाढ़ी क्यों पहनी थी ?

दीवान—हर्ज क्या है ? डाढ़ी की क़दर कुछ कम है, और ख़ातिर कितनी !

गुजारी—तुम्हारी ख़ातिर के कपार पर सौ झाड़ू ! बाप-दादे का नाम डुबाया। क्या होगा इतना पैसा इकठा करके—एक लड़का भी तो नहीं है।

दीवान—दीवान हूँ। जब राजा बनूँगा तो लड़के आप पैदा होंगे। रुपये से क्या नहीं होता। चलो जीमने को दो, फिर जाना पड़ेगा कोठी की तरफ़। नौकरनी को मना कर देना; डाढ़ी की बात किसी से कहे नहीं। हाँ, डाढ़ी को उठाकर रख दो।

गुजारी--मैं नहीं छू सकूँगी उस डाढ़ी को। न जाने किसी मुर्दे के बाल हैं कि काहे के बाल हैं। तुम्हें ग़रज़ हो, आप उठा रक्खो।

(जाती है)

दीवान—हाँ उठा रक्खूँ। जिसको रक्खोगे वही रक्खेगा। राजा की ज़ात—ख़ातिर कितनी, सन्मान कितना! (जाता है)

छठा दृश्य

बरेली—सरदार-कोठी का दालान

रुहेला औरतें

(गाना)

ठीक यह वक्त. नहीं आली सजाने का तन
ऐसा मौक़ा नहीं जो लूटें बहारे जोबन,
यह घड़ी वह है कि जब क़ौम पै आफ़त आई।
यह वो दिन हैं कि है दुश्मन पै क़यामत आई॥
आओ, दिलवर को मोहब्बत से सजायें मिलकर।
फिर उसे जङ्ग में हँस-हँस के पठाएँ मिलकर॥

(जाती हैं)

(हाफ़िज़ की बीबी आती है)

हाफ़िज़ की बीबी—दिल नहीं मानता। न जाने इस जङ्ग में क्या होगा! अपने शौहर और बेटों को लड़ाई में भेजकर ये सब .ख़ुश हैं। अफ़ग़ान औरतें हिन्दुस्तान की हवा में ज़रा भी नहीं बदलीं।

(जिन्नत आती है)

जिन्नतउन्निसा—हाँ दादी, मग़रिब का वक़्त हुआ; अभी तक कोई भी वापस न आया। हम सबने हार बना रक्खे हैं। लड़ाई जीतकर लौट आनेवाले बहादुरों को पहनाने के लिए !

हाफ़िज़ की बीबी—इन्शाअल्लाह, तुम्हारी ज़बान मुबारक !

जिन्नतउन्निसा—अच्छा दादीजान, इन्सान लड़ते क्यों हैं ? एक शख़्स दूसरे की छाती में तलवार भोंक देता है; फिर भी ख़ूबी यह है कि दोनों इन्सान ही हैं। एक मामूली सी लड़ाई इन्सान बन्द न कर सका और इसी पर, कहा जाता है, इन्सान बहुत अक़्लमन्द है।

हाफ़िज़ की बीबी—अरी तू ये सब बातें कहाँ से सीख गई। लड़ाई न हो फिर मरद क्या ? मरद लड़ेंगे अपने मुल्क के लिए, दीन के लिए, ईमान के लिए—अपनी वालदाओं और हमशीराओं की इज़्ज़त के लिए। अगर ऐसा न किया तो मर्द कैसे ?

जिन्नतउन्निसा—आपकी बातें मुझे अच्छी नहीं लगतीं। रात भर मज़े में सोयें; सुबह तलवार हाथ में लेकर मरने को दौड़ें। कोई ज़रूरत न होती अगर एक इन्सान दूसरे इन्सान के मुल्क पर हमला न करता, दूसरे के दीन और मज़हब से झगड़ा न रखता; दूसरे की वालदा और हमशीरा को अपनी ही वालदा और हमशीरा समझता। इन्सान सब कुछ कर सकता है और यह मामूली सा काम नहीं कर सकता। इन्सान क़तई अक़्लमन्द नहीं, बिल्कुल बेवक़ूफ़ है। जानवर आपस में लड़ते हैं, झगड़ते हैं; अगर इन्सान भी वैसा ही करे तो इन्सान और जानवर में फ़र्क़ क्या रहा ?

हाफ़िज़ की बीवी—फ़र्क़ ? पहले हमारी जैसी उम्र होने दो तब समझोगी। इन्सान की ज़बान जानवरों के दाँतों और नाख़ूनों से ज़्यादा तेज़ है।

जिन्नतउन्निसा—अच्छा मैं देखूँ ; उधर सब क्या कर रही हैं ?

(जाती है)

हाफ़िज़ की बीवी—फूल से ज़्यादा नाज़ुक ; ख़ुशी का एक दरिया इसने इस महल में बहा रक्खा है। न जाने क़िस्मत में क्या क्या लिखा है ? शादी होते-होते रुक गई।

(बाहर औरतों के रोने की आवाज़—"हाय हाय", "या अल्लाह", "या ख़ुदा")

हाफ़िज़ की बीवी—यह क्या—यह रोना-पीटना कैसा ?

(बाहर आवाज़—भागो, भागो ; नवाब की फ़ौज शहर लूटने आ रही है।)

हाफ़िज़ की बीवी—कौन यह ख़बर लाया ?

(फ़ैज़ुल्ला आता है)

फ़ैज़ुल्ला—ख़ुदा नाराज़ है। लड़ाई में हमने शिकस्त खाई।

हाफ़िज़ की बीवी—शिकस्त खाई ?

फ़ैज़ुल्ला—हाँ, बदनसीबी !

हाफ़िज़ की बीवी—क्या तुम्हें छोड़कर दूसरा कोई ऐसा जीता न था जो यहाँ यह ख़बर पहुँचा सकता ?

फ़ैज़ुल्ला—था और है। वे सब अब भी लड़ाई के मैदान में हैं। वे अब भी जी-जान से लड़ रहे हैं, जिससे दुश्मन शहर में न घुस सकें।

हाफ़िज़ की बीवी—और मेरे शौहर हाफ़िज़ साहब, वे भी मैदान में हैं ?

फ़ैज़ुल्ला—हाँ मैदान में—मगर, मगर......

हाफ़िज़ की बीवी—क्या ? जीभ रुक क्यों रही है ? क्या वे मैदाने-जङ्ग में, दुश्मनों की ख़ून भरी लाशों के ऊपर, बहादुरी की नींद सो गये ?

फ़ैज़ुल्ला—हाँ, बारह आफ़ताब की तरह चमकनेवाले मेरे बहादुर दादा साहब—हज़ारों दुश्मनों को मारकर आफ़ताब मग़रिब की ओर देखते हुए जिस वक्त मग़रिब की नमाज़ पढ़ रहे थे, उस वक्त एक गोली आकर उनकी छाती में घुस गई।

हाफ़िज़ की बीवी—और तुम कायर उनकी पाक लाश को स्यारों और कुत्तों के लिए छोड़कर यहाँ भाग आये हो, अपनी जान बचाने के लिए ?

फ़ैज़ुल्ला—नाराज़ न हूजिए। उन्हीं के हुक्म से आया। बचपन में ही वालदा की मौत हो गई। आप ही का दूध पीकर मैं बड़ा हुआ। इसलिए कायर मैं हो नहीं सकता। मैं अपनी जान बचाने की ग़रज़ से नहीं आया हूँ। मैं आया हूँ आप लोगों की इज़्ज़त, रुहेला औरतों की पाक असमत को बचाने—तशरीफ़ ले चलिए। शहर में दुश्मनों के घुसने के पेश्तर मैं आप सबको बेख़तरे जगह पर पहूँचा दूँ। उसके बाद मैं अपना फ़र्ज़ अदा करूँगा।

हाफ़िज़ की बीवी—इतने रोज़ मेरी इज़्ज़त बचाने के जो मालिक थे उनकी लाश मैदान में सड़े ! फ़ैज़ुल्ला, अपनी इज़्ज़त की फ़िक्र हम ख़ुद कर लेंगे। तुम जाओ—अगर मुझ पर तुम्हारा कुछ भी ख़याल हो तो

जैसे भी हो सके, वह लाश यहाँ उठा लाओ। बाक़ायदा क़द्र और अदब के साथ वह लाश जब तक क़ब्र में रक्खी न जायगी, तब तक मैं यहाँ से न हिलूँगी। दूसरी औरतों को हटाने का इन्तज़ाम किसी दूसरे शख़्स को सौंप दो।

फ़ैज़ुल्ला—जो इरशाद! आपका हुक्म सर-आँखों पर है। मैं दादाजान की लाश लेकर हाज़िर हूँगा।

(बाहर औरतों की आवज़—नवाब के सिपाही ड्योढ़ी में घुस रहे हैं, होशियार, होशियार, भागो।)

फ़ैज़ुल्ला—हमारी फ़ौज इनको रोक न सकी। क्या करूँ! जाऊँ! मैं यहाँ न रहूँगा।

(बाहर शुजाउद्दौला के सिपाही—नवाब शुजाउद्दौला सलामत—अल्लाहो अकबर! इधर-इधर।)

फ़ैज़ुल्ला—होशियार कुत्तो! अभी एक अफ़ग़ान सिपाही यहाँ मौजूद है। (जाता है)

हाफ़िज़ की बीबी—या अल्लाह!

(बाहर से फ़ैज़ुल्ला की आवाज़—भागिए, भागिए; मैं मर सकूँगा लेकिन आपको बचा न सकूँगा।)

हाफ़िज़ की बीबी—या ख़ुदा, तुझे यही मंज़ूर था! क्या मेरे शौहर की लाश उसी मैदान में पड़ी सड़ेगी!

(मीर क़ासिम आता है)

मीर क़ासिम—ग़ैरमुमकिन है। जो बहादुर सिर्फ़ एक शख़्स की जान बचाने के वास्ते अपनी सारी रियाया की जान दुश्मनों की तलवार

के नीचे रख सकता है, उसकी पाक लाश दुनिया के आला मज़ार के नीचे सोकर इन्सान के अदब को हमेशा अपनी ओर खींचेगी। मैं आपके शौहर मरहूम की लाश ख़ुद मैदान से उठा लाया हूँ।

हाफ़िज़ की बीबी—लाये हैं? कौन हैं आप बहादुर, आपने मेरे बेटे का काम किया है।

मीर क़ासिम—बहादुर नहीं; कायर, बदनसीब। मुझको पनाह देकर ही आज आप इस मुसीबत में गिरफ़्तार हैं।

हाफ़िज़ की बीबी—कौन हैं आप? बङ्गाल के नवाब! मीर क़ासिम!

मीर क़ासिम—नवाब नहीं अम्मा साहबा! ग़ुलाम का भी ग़ुलाम! तक़दीर का मारा हुआ! रास्ते के कुत्ते से भी बदतर! आपका बदनसीब लड़का! क़ासिम अली। रोहतासगढ़ के क़िले में बंगाल की नवाबी को क़ब्र में दफ़ना कर यहाँ भाग आया था। मेरे ही लिए—रुहेलों के बेशक़ीमत सरताज—फ़िरिश्ते से भी बेहतर, हाफ़िज़ रहमत अली आज हमेशा के लिए चले गये। मैंने इस लड़ाई में तलवार पकड़नी चाही थी, मगर हाफ़िज़ साहब ने मुझे इजाज़त न दी। लेकिन इस ग़ुलाम ने उस हुक्म को न मानकर मामूली सिपाही के लिबास में उनका साथ दिया था। बङ्गाल की नवाबी करते वक़्त जो फ़ख़्र मैंने हासिल नहीं किया था उससे बढ़कर फ़ख़्र मैंने हासिल किया आपके शौहर साहब की लाश को अपने कन्धे पर उठाकर। दुश्मन शहर में आ गये। तशरीफ़ ले चलकर जल्द बतलाइए मैं इन्हें कहाँ दफ़नाऊँ!

हाफ़िज़ की बीबी—चलिए—दिखा देती हूँ। आपका हज़ार शुक्रिया! ख़ुदा हाफ़िज़!

(मीर क़ासिम के साथ हाफ़िज़ की बीबी जाती है—ख़ून से लथपथ फ़ैज़ुल्ला आता है)

फ़ैज़ुल्ला—ग़ैरमुमकिन, हज़ारों दुश्मन—अकेला कहाँ तक रोकूँ। मगर फिर भी पठानों के हरम की क़दर! तलवार! तुम इन थके हाथों को छोड़ना नहीं! कहाँ हो जिन्नत? जिन्नत! जिन्नत, मरने के पहले काश एक दफ़े देख लेता तो उसे छुटकारा दे आता।

(जाता है)

(जिन्नत आती है)

जिन्नतउन्निसा—फ़ैज़ू, फ़ैज़ू, मैं आ गई। कहाँ गये—वे हैं। बहादुर सैकड़ों सिपाहियों से अकेले लड़ रहे हैं। शाबाश फ़ैज़ू!

(बाहर से फ़ैज़ुल्ला की आवाज़—जिन्नत अगर मेरी आवाज़ तुम्हारे कान में पहुँचे तो सुनो। जहाँ पर भी हो, ख़ुदकुशी कर लो—गिरफ़्तार न होना।)

(शुजाउद्दौला के सिपाही आते हैं)

पहला—यह देखो, यहाँ यह हुस्न-परी!

दूसरा—पकड़-पकड़, भाग न जाय।

पहला—आओ बीबी, शादी का वक़्त क़रीब है।

जिन्नतउन्निसा—मुझे मार डालो, मगर बदन पर हाथ न लगाओ।

पहला—पहले-पहल सब यही कहती हैं—ऐसे नरम हाथों को पकड़ूँ नहीं? (हाथ पकड़ता है)

जिन्नतउन्निसा—छोड़ दे, बदज़ात!

पहला—फ़ैज़ाबाद पहुँचाकर छोड़ दूँगा। डर क्या है?

(शुजाउद्दौला आते हैं)

शुजाउद्दौला—ख़बरदार ! कोई औरतों की बेइज्ज़ती न करना। नाज़नीन, डरो मत, हमारे साथ आओ।

(लताफ़त अली और दीवान आते हैं)

लताफ़त अली—जनाब, फ़ैज़ुल्ला गिरफ़्तार कर लिया गया।

जिन्नत उन्निसा—या अल्लाह ! फ़ैज़ू फ़ैज़ू। (बेहोश हो जाती है)

दीवान—आह ! मूर्च्छित हो गई है, बेचारी। कमसिनी में ऐसा हुआ ही करता है। अभी ठीक हो जायगा। हाफ़िज़ साहब की दुलारी पोती ! शादी का पूरा इन्तज़ाम था। आप अच्छा मर्द देखकर ब्याह कर देना।

शुजाउद्दौला—न तो बच्चों और औरतों की कोई बेइज़्ज़ती हो और न उनमें से किसी का क़त्ल। फ़ैज़ुल्ला को गिरफ़्तारी की ही हालत में बाअदब फ़ैज़ाबाद रवाना करो। उसके ज़ख्मों के इलाज का पूरा पूरा इन्तज़ाम फ़ौरन किया जाय। ऐसा बहादुर इसके पहले मुझे कहीं नज़र नहीं आया। तवारीख़ इसकी तारीफ़ हमेशा करेगी। हाँ, हाफ़िज़ साहब के यहाँ की और और मस्तूरात के हमराह इसको भी लिया जाय।

लताफ़त अली—जो इरशाद ! (शुजा० जाता है)

दीवान—जब तक हाफ़िज़ साहब मालिक थे, मैं उनका नौकर था। अब आप मालिक हैं, आपका नौकर हूँ।

लताफ़त अली—तुम्हारी ही वजह से हमें कामयाबी हासिल हुई।

दीवान—मैं कौन हूँ ? मैं कौन हूँ ! सब राम की कृपा है।

लताफ़त अली—चलिए, अब ख़ज़ाने की तरफ़

तीसरा अङ्क

पहला दृश्य

एक पेड़ के तले गुलनार, बहार और अज़ीमन

गुलनार—मुसीबत, मुसीबत—तूफ़ान-बरसात! चलते-चलते थक गये। खाना नहीं, पानी नहीं, छोटा बच्चा बुख़ार में बेहोश! कहीं पनाह नहीं, सब अल्लाह की मरज़ी!

बहार—अम्मीजान, अज़ीमन सो गया; अँधेरे में, इस बरसात में पेड़ के नीचे अब कब तक रहेंगे?

गुलनार—अभी बरसात रुक जायगी, डरो नहीं बेटा।

बहार—अम्मीजान दिन पर दिन भुट्टा और चना तो खाया नहीं जाता। भूख से हैरान हो रहा हूँ। अम्मीजान तुम कैसे दिन पर दिन लगातार रोज़ा रखती हो?

अज़ीमन—अम्मीजान, क्या अब्बाजान आ गये?

गुलनार—नहीं बेटा।

अज़ीमन—बड़ी भूख लग रही है अम्मीजान।

गुलनार—अभी थोड़ी देर में सुबह हो जायगी। कोई गाँव ढूँढ़कर तुम्हारे लिए खाने का इन्तज़ाम करूँगी।

बहार—गाँव के सब लोग भी तो खाने को नहीं देते अम्मीजान।

कोई तो मारने दौड़ता है और कोई मेहरबानी से थोड़ा-सा दे देता है। अम्मीजान, अब्बाजान तो नवाब थे, फिर हमारे ऊपर यह मुसीबत क्यों ? भीख माँगने पर भी लोग नहीं देते।

अज़ीमन—बड़े होने पर मैं भी नवाब बनूँगा—है न भाईजान ?

बहार—नहीं, नवाब होने पर आखिर में इस तरह भीख माँगनी पड़ती है। हम ग़रीब ही रहेंगे, मेहनत करके खायेंगे—क्यों ठीक है न अम्माँजान ?

गुलनार—(स्वगत) बच्चों को इस तरह रास्ते और जङ्गल में ही खोना पड़ेगा। ये फूल से बच्चे कब तक इस तक़लीफ को बरदाश्त करेंगे !

अज़ीमन—अम्मीजान, बहुत भूख लग रही है।

गुलनार—ज़रा सा और सब्र करो बेटा, सुबह अभी हो जायगी। या अल्लाह, रहम कर।

(गाती हुई छाया आती है)

पनियाँ बरखे, बरखे अँखिया रे
बन घन गरजे घन, मुँदत नैन अँधियारे
दामिनि दमके, चित चमके
पागल पवन बहैं मतवारे
जात यमपुर ओर अकेला राही
साथ न कोई सखिया रे।

गुलनार—सड़क पर राहगीर चलने लग गये। अब ज़रूर सुबह होने में देर नहीं। कौन हो तुम, किधर जा रही हो ? हम भी राही हैं, ज़रा रुको न ? साथ ही चलेंगी।

छाया—साथ चलेगी ! तू कौन है ? ऐसी तूफ़ानी रात में अकेली पेड़ के नीचे ! कौन है तू !

गुलनार—मैं—मैं ! (स्वगत) क्या कहूँ ! (प्रकट) मैं मुसाफ़िर हूँ ।

छाया—मुसाफ़िर ? कहाँ जायगी !

गुलनार—मालूम नहीं, पास ही किसी आबादी की तरफ़ ।

छाया—हा हा हा—ओ, तू मेरी ही जैसी है । नहीं तो इतनी रात में पेड़ के नीचे क्यों रहती ! क्या तू भी जाति से निकाली गई है । क्या तेरा भी हाथ पकड़ा था ! उसके बाद घर से निकाल दिया ! देखूँ, देखूँ ज़रा तुझे । हाँ, अँधेरे में भी दिख रहा है—तू सुन्दरी है, इसी लिए न तेरी ऐसी दशा है ! अरे तेरे साथ वे दोनों कौन हैं ?

गुलनार—क्या कहूँ अम्माँ, ये दोनों इस बदनसीब के बचे हैं ।

छाया—तेरे बच्चे हैं ! ये तो बड़े सुन्दर हैं । तब तू पेड़ के तले क्यों ! मेरी तरह तू तो जाति से नहीं निकाली गई है ?

गुलनार—मैं भिखारिन हूँ ।

बहार—नहीं, नहीं; भिखारिन क्यों होंगी—मेरे अब्बाजान नवाब हैं ।

छाया—नवाब, नवाब, तेरे पति नवाब हैं । और तू पेड़ के तले ! ठीक है । नवाब की बहुत बेगमें हैं । कोई महल में और कोई पेड़ के नीचे । कोई भीख माँगती हैं, कोई छुरी पकड़ती हैं । कोई हँसती हैं तो कोई रोती हैं । यहाँ तो खेल है जिसमें जान की बाज़ी रक्खी जाती है ।

गुलनार—(स्वगत) कौन है यह दीवानी ! (प्रकट) तुम कौन हो ?

छाया—मैं, यह नहीं जानती। कोई कहता है पागल, कोई कहता है भिखारी। वह एक दिन—न तो रात थी, और न दिन—घर में कोई था नहीं; माँ गई थी पानी भरने; पिता कहाँ थे, याद नहीं। शिकार करने आया था, सो पानी माँगा। मैंने पानी दिया। उसने मेरा हाथ पकड़ा। उसके बाद—उसके बाद—अच्छा बतलाओ तो वह कौन सा गाँव था?

गुलनार—मैं क्या जानूँ?

छाया—ओह जानती नहीं हो। वह भी नवाब था। तेरे पति भी नवाब हैं न? तब भी तू नहीं जानती? बाप ने घर से निकाल दिया—माँ ने आँखें पोंछीं, लोगों ने कहा—तू अजात हो गई है। तब से ढूँढ़ रही हूँ। हाँ ढूँढ़ रही हूँ। अगर एक दफ़े मिल जाय। कितने नगर, कितने देश!

अज़ीमन—अम्मीजान, बड़ी प्यास, बड़ी भूख!

बहार—अम्मीजान, अज़ीमन क्या खायगा, मैं क्या खाऊँगा?

गुलनार—चलो बेटा, फ़जर हो गया। चलो गाँव की तरफ़ चलें। (स्वगत) काश मैं भी ऐसी दीवानी होती।

छाया—बच्चों को खाना चाहिए। तो अब तक कहा क्यों नहीं! खाने की क्या परवा है? भीख माँगने से भात मिल जाता है, पर जाति नहीं मिलती। यह ले, इन्हें खिला। मुझे खाने को बहुत मिल जाता है। ले—ले न? अपने बच्चों को खिला।

बहार—अम्मीजान, देखो कितना खाना है। आज ख़ूब खायेंगे, तुम भी कुछ खाओ न अम्मीजान!

अज़ीमन—मुझे सख़्त प्यास लगी है, पानी बिना पिये मैं कुछ नहीं खा सकूँगा।

छाया—पानी चाहिए ! मैं ला देती हूँ ! लोटा है ?

गुलनार—लोटा कहाँ मिलेगा ?

छाया—ओह ! तुम भी चुल्लू में पानी पीती हो। ठीक मेरी तरह। अच्छा ठहरो, मैं आँचल में पानी भर लाती हूँ।

(जाती है)

गुलनार—अहा इस दीवानी के दिल में भी दूसरों के लिए दर्द है और या अल्लाह, क्या तेरे दिल में हमारे लिए कोई दर्द नहीं। नहीं तो मैं अब भी क्यों जी रही हूँ !

(दो सिपाही आते हैं)

पहला—चारों तरफ़ ढूँढ़-पड़ताल पड़ गई है। सब रुहेलों को साफ़ कर डाला। जितने मिले सब क़ैद कर लिये गये। अब भी ढूँढ़-पड़ताल कम नहीं हुई। शायद कोई छिटककर चली न गई हो।

दूसरा—हाथी, पालकी, सिपाही सब चले गये और हम मियाँ मिट्ठू अब ढूँढ़ते ही रहेंगे ? चलो अब।

अज़ीमन—अम्मीजान, पानी।

पहला—अरे यह कौन ?

दूसरा—अरे ! वाह वाह वाह ! ख़ूबसूरत परी !

पहला—ज़रूर रुहेलों के घर की; गिरफ़्तार करो। बीबी तशरीफ़ लाइए। पेड़ तले क्यों ? पालकी पर चलिए। (आगे बढ़ता है)

गुलनार—ख़बरदार कुत्ते, दूर रहो।

दूसरा—शाबाश बीबी—वाह वाह, वाह वाह. हूँ:—देख उन दो बच्चों को पकड़, मैं इसे सँभालता हूँ।

(छाया आती है।)

छाया—(छुरी निकालकर) होशियार! अभी काटकर बोटी-बोटी कर दूँगी।

पहला—अरे एक और! बीबी, छुरी दिखाकर डराओगी? हमारे पास तलवारें हैं।

बहार और अज़ीमन—अम्मीजान, तुम भाग जाओ, हमें पकड़ने दो। तुम जाओ।

पहला—कोई नहीं भाग सकता; हम नवाब के सिपाही हैं।

छाया—अगर तुम्हारे नवाब भी मिल जायँ तो उनकी छाती में छुरी भोंक दूँगी। अब भी कहती हूँ। दूर हो जा!

(ग़फ़ूर आता है)

ग़फ़ूर—कौन है बदज़ात, जो औरतों पर हाथ उठाता है।

पहला—तेरा बाप।

ग़फ़ूर अली—मेरे बाप औरतों पर हाथ नहीं उठाते थे। वे मर्द थे। जो औरतों पर हाथ उठाते हैं वे जानवर हैं, और उनकी क़ुरबानी ऐसे की जाती है।

(पहले सिपाही को मार डालता है दूसराभाग जाता है)

गुलनार—कौन हैं बहादुर आप, जिन्होंने मेरी इज्ज़त बचाई?

अज़ीमन—अम्मीजान, मुझे उठाओ।

ग़फ़ूर—यह क्या, यह किसकी आवाज़ ! मेरे आक़ा के साहबज़ादे ! मेरी मालकिन—मेरी माँ !

गुलनार—कौन ग़फ़ूर ?

बहार और अज़ीमन—ग़फ़ूर, ग़फ़ूर, तुम ! अब्बाजान कहाँ हैं ?

ग़फ़ूर—आप ही को ढूँढ़ने फ़ैज़ाबाद गया। सुना कि आप भाग गये हैं। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते आज इन्शाअल्लाह एकाएक आप मिल गये।

छाया—यह कौन तुम्हारा ही कोई अपना आदमी है न ? देखा, नवाब का अत्याचार—देखा न ? ऐसी नवाबी क्या टिक सकती है ? यह औरत नहीं मानते, बच्चे नहीं मानते, बूढ़े नहीं मानते, औरतें इनके हाथ के खिलौने हैं—एक नवाब उसके हज़ार-हज़ार बेगमें ! नवाबी तख़्त के नीचे बारूद, ऊपर बारूद, हर महल में बारूद, कुछ न बचेगा, सब जलेगा, सब जल जायगा। जैसे मैं जल रही हूँ ! जैसे मैं जल रही हूँ ! जाऊँ जाऊँ, ढूँढ़कर देखूँ—कहाँ मिलेगा वह; कहाँ मिलेगा वह !

(जाती है)

ग़फ़ूर—कौन है यह ! कोई दीवानी ?

गुलनार—ठीक समझ न सकी।

ग़फ़ूर—चलिए अम्माँ साहबा, इन्शा अल्लाह जब आप लोग मिल गये तब मैं अपने आक़ा को भी ज़रूर ढूँढ़ निकालूँगा। यह रुहेलखंड की सरहद है; चलिए दिल्ली के रास्ते, आपको अपने ग़रीबख़ाने में रखकर फिर निकलूँगा, नवाब साहब की तलाश में।

अज़ीमन—अम्मीजान, अब तो मुझसे पैदल नहीं चला जाता।

गफ़ूर—अब आपको पैदल न जाना होगा मेरे लाल साहब। बूढ़ा होने पर भी, आप दोनों को अपने कंधों पर बिठा ले जाने की ताक़त अभी मुझमें मौजूद है। आइए अम्मा साहिबा, आगे चलकर सवारी की तलाश करें।

(सब जाते हैं)

दूसरा दृश्य

फ़ैज़ाबाद—महल के अन्दर कमरा

[बहू बेगम और दुराब अली]

बहू बेगम—दुराब अली ! तुम मेरे लड़के की तरह हो। तुम मुझे अपनी वालदा समझते हो न ? तब मुझे थोड़ा सा ज़हर लाकर दो ; मैं अब जीना फ़िज़ूल समझती हूँ।

दुराब अली—नवाब साहब ने आते ही मीर क़ासिम की बेगम और बच्चों को तलाश किया था। मुर्तज़ा ख़ाँ ने ही उनको समझाया है कि आप ही की मदद से वे भाग गये हैं। सुना है, हुज़ूर आप पर नाराज़ हैं।

बहू बेगम—बदक़िस्मत मीर क़ासिम की बदनसीब बेगम—कौन जानता है कि वह अब भी दुनिया में ज़िन्दा है या नहीं। काश वह मर गई हो तो उसके लिए हमीं ज़िम्मेदार हैं।

दुराब अली—दो रोज़ तक वे समझ न सकी थीं कि मैं ही छिपकर उनकी मदद कर रहा हूँ। तीसरे रोज़ एक जंगली भैंसे ने जब उन पर

हमला किया तो मुझे बाहर निकलना पड़ा। बच्चों ने पहचान लिया। उसके बाद बेगम ! ओफ़्, अब भी उनकी वह तसवीर मेरी नज़र के सामने है ; उन्होंने मेरी तरफ़ आँसू भरी नजर से देखते हुए एक शेरनी की तरह गरजकर कहा—"तुम्हारे साथ मैंने ऐसी कौन सी दुश्मनी की है कि इस तरह मेरी तौहीन कर रहे हो ? अगर मुझे दो-चार दिन जीने देना चाहते हो तो अपनी मेहरबानियों से मुझे छुटकारा दो।" तब इतनी शर्म मालूम हुई कि ज़मीन दो टुकड़े होकर अगर मुझे छिपा लेती तो बेहतर था। मैं मुँह नीचा कर जिगर को हाथों से दबाये वापस चला आया।

बहू बेगम—रुहेलों की भी बरबादी हो गई। सुना है, उनकी औरतों को भी गिरफ़्तार करके लाया गया है।

दुराब अली—दुरुस्त है। पालकियों और तामज़ामों में ज़नानी सवारियाँ आ रही हैं। फ़ैज़ुल्ला को क़ैद कर नवाब अपने साथ ही लाये हैं। लाल कोठी में उनको ठहराया गया है।

बहू बेगम—इसी लिए शहर में ख़ुशी मनाने का ऐलान किया गया है। हर घर के सामने दिये जलाये जायँगे, ड्योढ़ियों पर शहनाई बजेगी, मसजिदों में नमाज़ पढ़ी जायगी। या अल्लाह, इससे ज़्यादा गुनाह और क्या हो सकता है ?

दुराब अली—हुज़ूर, इसी का नाम नवाबी है।

बहू बेगम—तुम जाकर हमारी बाँदियों को आगाह कर दो कि मेरे महल में रोशनियाँ न हों और दिये न जलाये जायँ।

दुराब अली—नवाब साहब शायद मेरे ऊपर भी नाराज़ हैं।

बहू बेगम—तुम्हें अपने लिए कोई फ़िक्र नहीं, जब तक मैं ज़िन्दा हूँ।

दुराब अली—आप ही का ख़याल कर तो मैं आज भी इस दोज़ख़ में बैठा हूँ; नहीं तो भीख माँगना इससे अच्छा था।

(जाता है)

बहू बेगम—कै रोज़ की ज़िन्दगी है इन्सान की? लेकिन इस छोटी सी ज़िन्दगी में कितनी ख़ताएँ वह करता है!

(शुजाउद्दौला आते हैं)

शुजाउद्दौला—बेगम! शहर में आते ही सुना कि तुमने मीर क़ासिम की बेगम और बच्चों को रिहा कर दिया।

बहू बेगम—हुज़ूर ने ठीक ही सुना है।

शुजाउद्दौला—मेरे बिना हुक्म के, मेरी ग़ैरहाज़िरी में, उनको रिहा कर देना तुम्हारे लिए मुनासिब न था; ख़ास कर जब तुम जानती हो कि मीर क़ासिम के लिए ही इस जङ्ग का ऐलान हुआ है। इन सब सल्तनती कार्रवाइयों में तुम्हें दख़ल न देना चाहिए।

बहू बेगम—अगर ख़ता हुई, सज़ा दीजिए। लेकिन अर्ज़ है कि सख़्त सल्तनती कार्रवाइयों के गन्दे रास्ते पर चलते-चलते कभी-कभी तो इन्साफ़ और इन्सानियत की तरफ़ भी ख़याल किया कीजिए। याद रखिए, दोस्त हो चाहे दुश्मन, वह भी आप ही की तरह ख़ुदा का बन्दा है, इन्सान है। किसी पर ज़ुल्म करने के पहले, एक दफ़े अपने को ज़ुल्म किये जानेवाले की हैसियत पर खड़ा कर सोचिए, आपका दिल क्या कहता है।

शुजाउद्दौला—मैं तुमसे नसीहत सुनने नहीं आया। मेरी समझ अभी एक औरत से बदतर नहीं है। मैं देख रहा हूँ, बक्सर की लड़ाई में रुपयों की मदद देने के बाद से तुम्हारा दिमाग़ कुछ चढ़ता जा रहा है। शायद सोचा है कि रुपयों से तुमने नवाब को ख़रीद लिया है! तुम भूल रही हो कि तुम्हारे फ़र्ज़ की सरहद तुम्हारे अपने महल के बाहर नहीं है।

बहू बेगम—ग़लत है; फ़र्ज़ किसी के हुक्म के पीछे चलनेवाली चीज़ नहीं। मैं आपकी बेगम हूँ। मेरा यह फ़र्ज़ नहीं कि आप जो कुछ ज़ुल्म करें, उसे मैं पत्थर की तरह अपने महल के अन्दर बैठी देखा करूँ और चुपचाप अपनी क़िस्मत को रोऊँ। जब मैं देखूँगी, आप ज़ुल्म कर रहे हैं, इनसानियत से दूर जा रहे हैं, दीन को छोड़कर शैतान की तरफ़ बढ़ रहे हैं, मैं ज़रूर रोकने की कोशिश करूँगी। जहाँ तक मुझसे बन पड़ेगा मैं ऐसा न होने दूँगी। इससे अगर आप मेरे ऊपर नाराज़ हों, नाख़ुश हों, समझूँगी वह मेरी बदनसीबी है।

शुजाउद्दौला—तो क्या इससे मैं यह समझूँ कि रङ्गमहल के अन्दर तुम बाग़ी हो?

बहू बेगम—आज से नहीं। याद करके देखिए, कभी मैंने हुज़ूर के ज़ुल्मों से इत्तफ़ाक़ नहीं किया। और जब तक जीती रहूँगी तब तक मैं यही कोशिश करूँगी कि हुज़ूर के गुनाहों की तादाद न बढ़े। इसके लिए नाराज़गी और नाख़ुशी को मैं सर-आँखों पर क़बूल करूँगी; मगर एक बीबी के फ़र्ज़ से मैं हट नहीं सकती।

शुजाउद्दौला—तब देखता हूँ, तुम्हारे साथ ताल्लुकात मुझे छोड़ने पड़ेंगे। तुम मेरी ख़ास बेगम हो, इसी लिए तुम्हारी बहुत सी बातें मैं बरदाश्त कर लेता हूँ; फिर भी हर एक बात की कोई हद होनी चाहिए।

बहू बेगम—मैंने हुज़ूर से पहले ही अर्ज़ किया है कि अगर मेरा कोई क़ुसूर मुआफ़ी के क़ाबिल न हो, मुझे सज़ा दे सकते हैं। वह मुझे सर-आँखों पर मंज़ूर होगी; क्योंकि मैं हुज़ूर की बीबी हूँ, ख़ादिमा हूँ। लेकिन दूसरे पर मैं आपको ज़ुल्म नहीं करने दूँगी, चाहे मेरी क़िस्मत में कोई मुसीबत बदी हो।

(जाती है)

शुजाउद्दौला—देख रहा हूँ, कहीं चैन नहीं है। बाहर, तख़्त के बग़ल में ही, दोस्तों के लिबास में बाग़ियों का गिरोह; और अन्दर मेरी बहुत सी बेगमें, माशूक़ाएँ! मगर एक भी मेरे दिल की नहीं। आमेनू का मिज़ाज दिन ब दिन बढ़ता ही जा रहा है। इसको सबक़ देना बहुत ज़रूरी है। हाफ़िज़ रहमत की पोती—हाँ देखा, ख़ूबसूरत है। आमेनू की सज़ा, इस लड़की से मेरी शादी!

(जाता है)

तीसरा दृश्य

एक गाँव की सराय में

[जिन्नत]

जिन्नतउन्निसा—दादी कहाँ गई? फ़ैज़ुल्ला कहाँ रह गया? मुझको क़ैद कर क्यों ले जा रहे हैं? वहीं इन्होंने मुझे ख़त्म क्यों नहीं

कर दिया। किसी से मिलने भी नहीं देते। दिन भर तामज़ाम में बीतता है और रात में ऐसी ही किसी सराय में। उफ़् यह तकलीफ़ तो अब सही नहीं जाती। कितने आदमी थे! सब एक दिन की लड़ाई में काम आ गये। मैं क्यों न मरी! फ़ैजुल्ला को भी तो क़ैद करके ले जा रहे हैं; कहाँ हैं वे? क्या पास ही कहीं हैं? अगर चिल्लाऊँ तो क्या सुनाई नहीं देगा? मगर सुनाई देने पर भी वे क्या करेंगे, लाचार क़ैदी!

(गाती हुई छाया आती है)

गीत

रोती क्यों तू बाला!
रोती क्यों तू बाला मेरी
रोती क्यों तू बाला!
तेरे दिल की सुने, कहाँ है
वह तेरा दिलवाला?
दिल में आग लगा गया,
कुचला पैरों भाग।
जीना मरना एक सम
सब अनुराग-विराग—
हँसता है मतवाला।

छाया—तुझको भी वे ले जा रहे हैं? बहुतों को ले जा रहे हैं—बहुतों को। कोई तंबू में, कोई झोंपड़ी में और कोई पेड़ के नीचे, परन्तु तू सबसे अधिक सुन्दरी है। देखा--समझा—इसी का नाम है

नवाबी अमल। इनके अत्याचार से बङ्गाल खतम हुआ, दिल्ली श्मशान हुई। यह भी जायगा। जायगा नहीं ? तुम्हारे आँसू क्या विफल होंगे ? साँप लेकर खेलते हैं; दिल में सोचते हैं, बड़ी बहादुरी की है। लेकिन जानते नहीं हैं कि साँप के मुँह में ज़हर है ! मैं ढूँढ़ रही हूँ, ढूँढ़ रही हूँ।

जिन्नतउन्निसा—तुम कौन हो; किसको ढूँढ़ रही हो ?

छाया—सुना है कोई राजपुत्र है या नवाब। धनी है, बड़ा आदमी है। मेरा हाथ पकड़ा था—मेरी जाति चली गई; लेकिन जान से नहीं मारा। इसी लिए तो जल-भुनकर मर रही हूँ। यहाँ-वहाँ, हर जगह ढूँढ़ रही हूँ। अगर एक बार मिल जाता ! सोचता होगा—ग़रीब हूँ, औरत हूँ, क्या कर सकती हूँ। हाः हाः हाः, जानता नहीं—औरत क्या नहीं कर सकती ?

जिन्नतउन्निसा—(स्वगत) दीवानी है ! आज कितने दिनों बाद फिर भी बात करने को कोई मिला तो सही। (प्रकट) तुम जिसको ढूँढ़ रही हो उसका नाम क्या है ? कहाँ रहता है ?

छाया—नहीं जानती। मगर देखकर पहचान सकती हूँ। वही एक दफ़े देखा था, न रात थी और न दिन। बेहोश हो गई थी। किस समय चला गया—मालूम नहीं। लेकिन याद है, उसने मेरा हाथ पकड़ा था। यह—ऐसे—ऐसे, वह चेहरा—वह चेहरा—डर से काँप उठी। कोई नहीं आया—कोई नहीं आया—फिर मैं बेहोश हो गई। आँखें खोलीं तो देखा माँ रो रही है। बाप ने घर से निकाल दिया। गाँववाले गर्दन झुकाकर खड़े रहे—किसी ने कुछ न कहा। सब भेड़ों का गिरोह—सब भेड़ों का गिरोह ! सिर्फ़ रोना जानते हैं, चिल्लाना जानते हैं ; भीख

माँगना जानते हैं। जब कोई उनकी बहन-बेटी का हाथ पकड़ लेता है तो उसको कुछ कहते नहीं—जानते हैं बहन-बेटी को दुतकारना, बिरादरी से बाहर कर देना, और घर से निकाल देना।

जिन्नतउन्निसा—तुम्हारा गाँव कहाँ था?

छाया—था क्यों, यहीं है। यही मिट्टी—बङ्गाल, अयोध्या, आगरा—सब एक ही गाँव हैं। हिंदुओं का—हिंदुओं का हिंदुस्तान। समझीं सदा की ज़मीन है, जन्मभूमि है—और गाँव कहाँ से आयेगा!

जिन्नतउन्निसा—तुम हिन्दू हो या मुसलमान?

छाया—न तो हिन्दू और न मुसलमान। मैं किसी दीन की नहीं। इसी लिए तो ढूँढ़ रही हूँ। तू कहाँ जायगी? तेरा क्या कोई अपना नहीं?

जिन्नतउन्निसा—थे—सब थे। सब लड़ाई में मर गये! मुझे शुजाउद्दौला गिरफ़्तार करके ले जा रहा है।

छाया—क्या कहा? तुझे गिरफ़्तार करके ले जा रहा है। तेरे अपने जो थे, सब मर गये? कोई नहीं है, कोई नहीं है?

जिन्नतउन्निसा—जो हैं, वे भी क़ैदी हैं।

छाया—अहा, तब तो तुझको बहुत कष्ट है। रहते हुए भी कोई नहीं है। क्या तू नवाब का अत्याचार सह सकेगी? तू इतनी सुन्दरी—इतनी कोमल—नहीं—तू नहीं सह सकती। तू भाग जा, भाग जा!

जिन्नतउन्निसा—भागूँ! पागल, भागूँ कैसे! मुझे ये जाने देंगे?

छाया—कौन रोकेगा! हूँ:, मुझे कोई रोकता है? तू भी जा!

जिन्नतउन्निसा—तुम्हें पागल समझकर नहीं रोकते, पर मुझे वे न जाने देंगे, बहन!

छाया—तूने मुझे बहन कहा; फिर क्या चिन्ता है। तू मेरी तरह पागल बन जा। यहाँ से चली जा; ये मनुष्य नहीं, जानवर हैं। जा, अँधेरे जङ्गल में शेर और भालुओं के पेट में चली जा तो भी हानि नहीं। फिर भी ओहो हो हो, याद आते ही, छाती काँप उठती है। देख, साँस से आग की चिनगारियाँ निकल रही हैं। रूखे बालों से आग की झार मिट्टी पर गिर रही है। पैर नहीं रक्खा जाता, तलवे जल रहे हैं—तू भाग, मेरा कपड़ा पहन ले—अपना कपड़ा मुझे दे। मैं ज़रा तामज़ाम में चढ़कर देखूँ।

जिन्नतउन्निसा—अगर वे तेरे ऊपर ज़ुल्म करें?

छाया—कोई डर नहीं, एक बार बेहोश हो गई थी, सच है, मगर अब बेहोश नहीं हो सकती। तू देर न कर, मेरा कपड़ा पहनकर पागल की तरह गाती-गाती चली जा। कोई कुछ न कहेगा, चाहे आत्महत्या कर लेना, फिर इस ज्वाला से तू बच जायगी, बच जायगी। दे दे अपनी पोशाक मुझे! दे! अब क़ैदी मैं हूँ और तू पगली है—हा: हा: हा:, क्या मज़ा! क्या मज़ा!

जिन्नतउन्निसा—लेकिन बहन, मैं कभी बाहर नहीं निकली।

छाया—उससे क्या? सब सह जायगा। सब सह जायगा। जैसे मुझे सह गया है। तू आ; अब देर न कर।

(दोनों अन्दर जाती हैं)

चौथा दृश्य

फ़ैज़ाबाद— क़ैदख़ाना

[ज़ंजीरों में जकड़ा हुआ फ़ैज़ुल्ला]

(शुजाउद्दौला आते हैं)

शुजाउद्दौला—बक्सर की लड़ाई में तुमने मेरी जो तौहीन की थी फ़ैज़ुल्ला, उसका बदला मैंने रुहेलखण्ड की लड़ाई में लिया है। हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ लड़ाई में मारा गया और उसकी बीबी ने भी, सुना है, अपने शौहर की लाश को दफ़नाकर ख़ुदकुशी कर ली। रहमत की पोती और साथ में और-और हसीनों को भी मैं गिरफ़्तार कर यहाँ ले आया हूँ। अगर चाहूँ तो तुम्हें मैं क़त्ल कर सकता हूँ, लेकिन अभी उसकी ज़रूरत नहीं है। दुश्मनी से ज़्यादा मुझे तुम्हारी दोस्ती ही पसन्द है। बोलो, क्या चाहते हो। शुजाउद्दौला की दोस्ती या दुश्मनी ?

फ़ैज़ुल्ला—आपकी बात मैंने ठीक-ठीक नहीं समझी। आप मेरे मुल्क के दुश्मन, ज़ात के दुश्मन हैं। आपने रुहेलखण्ड की आज़ादी को बरबाद कर दिया है। आपके साथ दोस्ती ! क्या आप मज़ाक़ कर रहे हैं ?

शुजाउद्दौला—नहीं, मज़ाक़ नहीं। बराबरवालों के साथ ही दुश्मनी होती है। तुम अभी लड़के हो, कमसिन हो। तुम्हारे साथ दुश्मनी करने से फ़ायदा ही क्या ?

फ़ैज़ुल्ला—समझा—उसके बाद !

शुजाउद्दौला—तुम रुहेलखण्ड के वली-उल्-सल्तनत हो। मैं तुम्हें अपने मातहत नवाब की हैसियत से रुहेलखण्ड की मसनद पर बिठा सकता हूँ और गिरफ़्तार किये हुए शख़्स भी सब रिहा किये जा सकते हैं, अगर तुम मेरे साथ नातेदारी कर सको। मेरी जो ख़्वाहिश है, वह बहुत ही आसान है। अगर चाहूँ तो बिला तुम्हारी मर्ज़ी के भी वह काम मैं कर सकता हूँ; मगर मैं वैसा करना नहीं चाहता।

फ़ैज़ुल्ला—फ़रमाइए।

शुजाउद्दौला—मैं हाफ़िज़ रहमत की पोती, तुम्हारी हमशीरा जिन्नत-उन्निसा से शादी करना चाहता हूँ—तुम्हारी मर्ज़ी से। और मैं वादा करने के लिए तैयार हूँ कि जिन्नतउन्निसा की औलाद ही वली-उल्-सल्तनत होगी। क्या तुम्हें मेरी राय से इत्तफ़ाक़ है?

फ़ैज़ुल्ला—क्या आपने जिन्नतउन्निसा को देखा है?

शुजाउद्दौला—हाँ, मगर गिरफ़्तारी के बाद नहीं, उसके पहले बरेली की कोठी में। यहाँ मैंने उसे अब भी नहीं देखा है—और न इस तरह देखना चाहता हूँ। मैं उसको अपनी बेगम की हैसियत से देखने का ही ख़्वाहिशगार हूँ और मुझे अज़हद ख़ुशी होगी, अगर उसके रिश्तेदार ब-ख़ुशी उसे मेरे हाथ सौंप देंगे। नवाब शुजाउद्दौला ने हाफ़िज़ रहमत के रिश्तेदारों की जिस्मानी आज़ादी में दस्तन्दाज़ नहीं किया है।

फ़ैज़ुल्ला—नवाब साहब, आपने फ़तह हासिल की है—आपके पास ताक़त हैमैं। इस वक़्त कमज़ोर हूँ। फिर भी यह मुमकिन नहीं कि मैं जान-बूझकर रुहेलखण्ड के दुश्मन के हाथ अपनी हमशीरा को

सौंप दूँ। लेकिन वह अगर अपनी .खुशी से आपको अपना ले तो बात दूसरी है।

शुजाउद्दौला--मतलब यह कि तुम्हें मेरी शर्त मंज़ूर नहीं ?

फ़ै.जुल्ला—नहीं।

शुजाउद्दौला—अभी लड़के हो। अच्छी तरह सोचकर देखो। रुहेलखण्ड की मसनद, मेरी दोस्ती और तुम्हारी आज़ादी मामूली सी बात नहीं।

फ़ै.जुल्ला—मेरे लिए इनकी कोई क़ीमत नहीं। अभी मैं आपका क़ैदी हूँ। आपकी यह शर्त एक एहसान है, जिसकी क़ीमत मेरी हमशीरा का हुस्न है। दुश्मनी जैसे बराबरवालों से होती है, नातेदारी भी वैसे ही बराबरवालों से होनी चाहिए। एक क़ैदी के पास ऐसी शर्तें पेश करना उसकी तौहीन करना है। क़ैदी होने पर भी मैं रुहेलखण्ड का वली-उल्-सल्तनत हूँ। आपकी मातहती की नवाबी की बनिस्बत मैं इस क़ैदखाने में मर जाना ज़्यादा पसन्द करता हूँ।

शुजाउद्दौला—ज़िदपसन्द कमीने! तब तुम यहीं बैठकर उस मौत का इंतज़ार करो। लेकिन इसके बाद कोई यह न कहे कि शुजाउद्दौला ज़ालिम था। मैंने उसे देखा—उसके हुस्न पर मैं .कुरबान हूँ, इसी लिए दोस्त की तरह मैं तुम्हारे पास आया था। मैं उसको बाँदी नहीं, बेगम बनाना चाहता हूँ। मैं उसके पास भी अपनी शर्त पेश करूँगा। तब तक क़ैदी होने पर भी तुम हैसियत के माफ़िक़ इज़्ज़त के साथ यहाँ रहोगे—अगर वह राज़ी न हुई तो फ़ैज़ाबाद की मसनद मुझे चैन नहीं देगी। (जाता है)

फ़ैज़ुल्ला—या ख़ुदा ! न जाने जिन्नत की क़िस्मत में क्या लिखा है । अगर ज़ालिम जबरदस्ती उसे अपनी बेगम बना ले तो कौन उसकी इज्ज़त बचा सकता है । और अगर वह राज़ी हो ! ओह ज़ंजीर, कितनी सख्त हो तुम ! अगर उस समय नानी राज़ी हो जाती, अगर औला क़िले पर मैं एक दफ़े इनको पहुँचा सकता तो ज़ालिम शुजाउद्दौला ! देख लेता किस तरह तुम ऐसी कमीनी शर्त मेरे सामने रखते । पर यह कौन है जिसकी ख़ूबसूरती से चाँद की मीठी रोशनी की तरह यह क़ैदखाना भी रोशन हो उठा । कौन हैं आप ?

(बहू बेगम और दुराब अली आते हैं)

बहू बेगम—दुराब अली ! चाभी खोल दो, ज़ंजीर उतार दो । जाओ बहादुर जवान, भाग जाओ । इस छिपे रास्ते से यह शख्स तुमको बाहर निकाल देगा । जाओ, अपनी सल्तनत को वापस जाओ । बहादुरों की क़िस्मत उनकी तलवार में रहती है । यह लो तलवार ।

फ़ैज़ुल्ला यह कौन सा जादू है ! आप कौन हैं ?

बहू बेगम—उसे सुनने से कोई फ़ायदा नहीं । तुम जल्द जाओ ।

फ़ैज़ुल्ला—लेकिन मेरी हमशीरा यहाँ क़ैद है ।

बहू बेगम—अगर हो सके, तलवार की मदद से उसको रिहा कराना । नवाब ने ख़ासमहल में उसे क़ैद किया है—कड़ा पहरा है । मैं अभी तक कोई ज़रिया निकाल नहीं सकी । अच्छा, तुम चल दो; दुराब अली, रास्ता दिखाओ ।

फ़ैज़ुल्ला—लेकिन अल्लाह की दुआ की तरह बरसनेवाली एहसान की वालदा ! आप कौन हैं यह बिला जाने मैं यहाँ से न जाऊँगा ।

दुराव अली—अवध की बेगम !

फ़ैज़ुल्ला—बेगम या मेरी वालदा ! अल्लाह को लाख शुक्रिया कि मैं यहाँ क़ैदी होकर आया और क़ैदख़ाने में भी उसका फ़ज़ल देखा । सलाम वालदा साहिबा ! सलाम ! अगर ज़िंदा रहा, तो इस औलाद की जान आप ही के क़दमों का शुक्रिया करेगी ।

——

पाँचवाँ दृश्य

रंगमहल—सजा हुआ कमरा ।

[बाँदियाँ]

गीत

आयेंगे सरताज ।

बनकर बालम अपनी प्रिया के आयेंगे घर आज ।

हुस्न परी जो नई अलबेली,

तिरछी चितवन मस्त नवेली,

भरी जवानी की अठखेली,

अजब नाज़ अंदाज़ ।

आयेंगे सरताज ।

दिखा के जलवा जल्द छिपाओ,

अपने बलमा को दिल से लगाओ,

नाचो गाओ ख़ुशी मनाओ, करो न कुछ भी लाज ।

आयेंगे सरताज ।

पहली—अरी क्या सचमुच शादी होगी ?

दूसरी—सचमुच शादी नहीं होगी तो क्या झूठ-मूठ शादी होगी ?

पहली—मगर अगर वह राज़ी न हो ?

दूसरी—राज़ी और ग़ैरराज़ी एक ही बात है—है क़िस्मतवाली, फिर भी नवाब साहब बेगम बनायेंगे ।

तीसरी—मगर यह कुछ अजीब ही क़िस्म की मालूम होती है। आँखें फाड़कर चारों तरफ़ देखती है और अपने मन में गाती रहती है ।

दूसरी—जङ्गल से पकड़ी हुई नई चिड़िया पहले ऐसा ही करती है, फिर दो दिन बाद देख लेना, हमीं पर रोब—हमीं पर हुक्म ! नवाब साहब, सुनते हैं, इन्हीं को अव्वल बेगम बनायेंगे । वह आ रही है ।

तीसरी—नवाब साहब का हुक्म याद है न ? कोई उससे बात न करे । आज वे ख़ुद तशरीफ़ लाकर अपनी मुहब्बत ज़ाहिर करेंगे ।

पहली—तो चलो, हम चल दें ।

तीसरी—वही अच्छा है ! हुँः न जाने कौन सा ऐसा हुस्न इसमें देखा ! इसी को कहते हैं नसीब !

(सब जाते हैं)

(छाया आती है)

छाया—कब आई हूँ—कब—कब यहाँ से जाऊँगी । रोशनी—कितनी रोशनी है—फूल—गीत—लेकिन सब ज़हर से भरा है ।

(शुजाउद्दौला आते हैं)

शुजाउद्दौला—हर्ज क्या है ! जब शादी ही करूँगा, बेगम, तो यहाँ आने में क्या हर्ज है । नाज़नी, मैं आपसे कुछ बातें करने आया हूँ ।

इससे आप कहीं यह ग़लतफ़हमी न कीजिएगा कि मैं किसी तरह आपकी बेक़दरी करूँगा। हाँ, आपको मैं शादी करने के बाद अपनी अव्वल बेगम बनाना चाहता हूँ।

छाया—कौन? कौन! ऐं? वही—हाँ वही—वही मुँह, वही चेहरा—याद है, याद है, भूली नहीं हूँ, कितने दिनों बाद, कितनी मुद्दत के बाद।

शुजाउद्दौला—ख़ूबसूरत हूर! क्या कह रही हैं आप? क्या इसके पहले भी आपने मुझे कहीं देखा है? मैं आपसे शादी करना चाहता हूँ। मसनद में चैन नहीं, ऐयाशी में अमन नहीं। मैं एक ऐसा दिल चाहता हूँ जो सब कुछ भूलकर सिर्फ़ मेरा ही बना रहे। मुझे आप नाउम्मीद न करें—मैं एक बड़ी उम्मीद के साथ आपके सामने हाज़िर हुआ हूँ।

छाया—पहचाना नहीं, वह शिकारी का लिबास, वही तुम वही मैं, बीच की कुछ मुद्दत जो खो गई। तुमने मेरा हाथ पकड़ा था, उसके बाद, आज तुम मिले हो।

शुजाउद्दौला—कौन? यह तो जिन्नतउन्निसा नहीं। तुम कौन हो? यहाँ कैसे आई?

छाया—झोपड़ी में तुमने मेरा हाथ पकड़ा था। आज तामजाम में बैठकर आई हूँ। बदला लूँगी। चोट खाई नागिन की तरह मैं इतने दिनों तुम्हें ढूँढ़ती फिरी हूँ। आज मिले हो। मैं कौन, मेरा घर कहाँ, आज सब याद आ गया। ग़रीब की लड़की और तुम अमीर, किसी को साहस न हुआ कि एक बात कहे, लेकिन अब?

शुजाउद्दौला—क्या तुम विट्ठलदास की लड़की हो?

छाया—पहचान लिया ? क्या वह भूलने की बात है ? पगली हो जाने पर भी मैं भूल न सकी।

शुजाउद्दौला —तुम यहाँ कैसे आई ? जिन्नतउन्निसा कहाँ है ?

छाया—उम्मीद के साथ आये थे—नाउम्मीद हुए ? एक और लड़की का सत्यानाश न कर सके—क्यों ? आग के अन्दर रहते हो—समझा है आँच न लगेगी। साँप के खिलाड़ी हो, सोचा है उसमें ज़हर नहीं है। कभी यह भी हो सकता है ! हाः हाः हाः—बदमाश, कायर अमीर हो इसलिए सोचा है आसानी से निकल भागोगे। असंभव है असंभव—उठो नारी जागो—असहाय अनाथ लड़की का सत्यानाश जिसने किया था--आज उसी के ख़ून से उसके पापों का प्रायश्चित्त करो ! यह छुरी इतने रोज़ सावधानी के साथ अपनी छाती में छिपा रक्खी थी—आज ठीक अपने लायक़ जगह पर यह आराम करेगी।

(नवाब की छाती में छुरी भोंकती है)

शुजाउद्दौला—(हाथ पकड़कर) बदज़ात, कौन है, दौड़ो—ख़ून।

छाया—फिर हाथ पकड़ा है—हाः हाः हाः लेकिन वह ताक़त अब इन हाथों में नहीं।

(बाँदियाँ आती हैं)

सब—हाय हाय क्या हुआ—क्या हुआ या अल्लाह !

शुजाउद्दौला—जल्द वज़ीरों को ख़बर दो, पहरा बुलाओ।

पहली—क्या हुज़ूर को ज़्यादा चोट आई है ?

दूसरी—मैं अभी ख़बर करती हूँ।

(जाती हैं)

शुजाउद्दौला—समझ में नहीं आता।

(मुर्तज़ा ख़ाँ और पहरेदार आते हैं)

मुर्तज़ा—या ख़ुदा, यह कैसा गज़ब!

शुजाउद्दौला—वह है बदज़ात, गिरफ़्तार करो।

मुर्तज़ा—(छुरी निकालकर) मामूली चोट है, कोई फ़िक्र नहीं।

छाया—ज़हरीली छुरी है। ख़ून में ज़हर मिल गया। अत्याचारी के ख़ून में—संसार में कोई तुमको बचा नहीं सकता। यही मैं चाहती थी। बहुत ढूँढ़ने के बाद मिले हो हा : हा : हा :!

शुजाउद्दौला—इस दीवानी को ले जाओ। कल चौक में सरेआम नंगी करके इसी छुरी से इसकी बोटी बोटी अलग कर दी जाय। जाओ, ले जाओ!

(पहरेदार आता है)

पहरेदार—फ़ैज़ुल्ला फ़रार हो गया

मुर्तज़ा ख़ाँ—क्या?

शुजाउद्दौला—चारों तरफ़ दुश्मन—चारों तरफ़ से दुश्मनी—कहाँ भागा—ढूँढ़ो—उसकी बहन जिन्नतउन्निसा भी भाग गई है। समझ में नहीं आता कि मेरे मातहतों की लापरवाही है या बेवफ़ाई। ऐलान कर दो—जो इनको गिरफ़्तार करा सकेगा, उसे लाख रुपया इनाम!

——

चौथा अङ्क

पहला दृश्य

मीर क़ासिम

मीर क़ासिम—ग़फ़ूर के घर पर भी उनका कोई पता न लगा। इस तरह वेष बदल कर जङ्गल जङ्गल कहाँ तक भटकते फिरें! फ़ायदा भी क्या? बेगम और बच्चे शुजाउद्दौला की कैद में हैं। नवाबी मसनद के नशे में मैंने उनकी हालत कितनी बदतर कर दी है। मेरे दुश्मन के घर पर मेरी बेगम और औलाद—और मैं? मेरे इस सर की क़ीमत लाख रुपये! नवाब का सर! कितनी क़दर है! बेश क़ीमती है। आबादी में जाने की हिम्मत नहीं—डर है। क्या जाने कोई पहचान ले! जहाँ भी जाता हूँ वहीं—खुदा की बद दुआ की तरह—बरबादी पीछे पीछे दौड़ती है। मीर क़ासिम! क़ासिम अली—अब भी जीने का कोई शौक़ है? दुनिया की किस सरहद पर किन पहाड़ों की दीवारों से घिरी हुई, बेईमानों की नापाक नज़रों से बची हुई—फ़रिश्तों के पहरे के अन्दर तुम्हारी नवाबी मसनद बिछी है, देखना चाहते हो? चलो—चलो—खून और कीचड़ भरी इस गन्दी जगह को छोड़कर चलो, उसी की तलाश में चलें।

(जिन्नत आती है)

जिन्नतउन्निसा—आप कौन जा रहे हैं—? ज़रा ठहरिए मेहरबान—भूख और प्यास से मैं मर रही हूँ—चला नहीं जाता—ज़रा मेरी मदद कीजिए। पानी—ज़रा सा पानी—

मीर क़ासिम—(लौटकर) कौन ? इस सुनसान मैदान में,......। फटे पुराने कपड़ों के अन्दर बादलों में छिपे चाँद की तरह कौन हैं आप ?

जिन्नतउन्निसा—ज़रा पानी—ज़रा पानी—(बैठ जाती है) मैं मर रही हूँ—बचाओ।

मीर क़ासिम—क्या करूँ ? एक कोस से भी लम्बा मैदान है। पानी का कहीं पता नहीं।

जिन्नतउन्निसा—पानी नहीं है ? अच्छा ! दुनिया आँखों के सामने अँधेरी होती जा रही है।

मीर क़ासिम—या अल्लाह, क्या करूँ—कौन है यह पहेलियों से घिरी हुई हूर, जो आज इस रेगिस्तान में मुझसे पानी की भीख माँग रही है ? कहाँ पानी मिले ? कैसे इसे बचाऊँ ?

जिन्नतउन्निसा—पानी ! पानी !

मीर क़ासिम—कहाँ पानी ? मीर क़ासिम ! बङ्गाल के नवाब ! बङ्गाल की करोड़ों रियाया ने, बङ्गाल के करोड़ों लाचारों ने ठीक इसी प्यासी लड़की की तरह, सूखे और रुँधे हुए गले से तुमसे दर्द भरी आवाज़ से पानी माँगा था। बड़ी उम्मीद के साथ सोने की सुराही में भरकर वह पानी तुम उनके मुँह के पास ले गये थे, लेकिन बेईमानों ने तुम्हारा फैला हुआ हाथ हटा

दिया। और आज इस सुनसान रेगिस्तान में मरती हुई यह पाक हूर तुमसे पानी माँग रही है, लेकिन तुम इतने बदक़िस्मत हो कि वह पानी तुम उसे पिला न सके। परवरदिगार—मुझे नवाबी नहीं चाहिए! बेगम नहीं चाहिए! औलाद नहीं चाहिए! इज़्ज़त नहीं चाहिए! सिर्फ़ पानी से भरा हुआ एक बादल का टुकड़ा कहीं से हाज़िर कर दे! रहीम—रहम कर; इस बदनसीब लड़की की जान बचा।

जिन्नतउन्निसा—नहीं मिला—ज़रा पानी—आप नहीं पिला सके, पानी!

मीर क़ासिम—हँस रही हो, क़ुदरत तुम हँस रही हो! इस मरती हुई लड़की को देखकर हँस रही हो! रहीम, कहाँ है उसका रहम? शैतान की क़ुदरत है—क्या करूँ? कैसे इस लड़की को बचाऊँ? मेरी बच्ची तुम कौन हो, मैं नहीं जानता; कभी तुम्हें देखा नहीं। तुम्हारे नाज़ुक चेहरे पर एक छिपा हुआ दर्द मैं देख रहा हूँ। क्यों मुझसे पानी माँगा! पानी कहाँ से दूँ! क्या इस बदनसीब मीर क़ासिम का ख़ून तुम्हारे उन ठण्डे ओंठों की प्यास बुझा सकेगा? तो लो—अपनी छाती के ख़ून को चुल्लू में भरकर मैं तुम्हारी प्यास बुझाऊँगा।

(ख़ुदकुशी करने को तैयार होता है)

ग़फ़ूर (बाहर)—वह हैं हमारे नवाब! नवाब साहब!

मीर क़ासिम—कौन! पहचानी हुई आवाज़—मरते वक़्त कौन है यह! दोस्त या दुश्मन!

(गुलनार, ग़फ़ूर, बहार और अज़ीमन आते हैं)

ग़फ़ूर– आक़ा ! मैं आपका ग़ुलाम ग़फ़ूर और मेरे साथ मेरी वालदा और भाई।

बहार और अज़ीमन—अब्बाजान ! अब्बाजान ! आप यहाँ छिपे हैं ?

गुलनार—हाथ पकड़े रहो, पकड़े रहो। अब न छोड़ना। या अल्लाह तेरा हज़ार शुक्र ! अब मेरा काम ख़त्म हुआ।

मीर क़ासिम—यह क्या ? तुम सब कहाँ से आ गये ! मुझे यह उम्मीद न थी। ग़फ़ूर, क्या मैं ख्वाब देख रहा हूँ ? ख़ैर, पहले ज़रा सा पानी उस बदनसीब प्यासी बच्ची के मुँह में डालो।

गुलनार—कौन है यह ?

मीर क़ासिम—नहीं पहचानता। गुलनार—अगर तुम्हें मेरी ज़िन्दगी प्यारी हो तो किसी क़दर उस बच्ची को बचाओ।

बहार—मेरे पास थोड़ा-सा दूध है। ग़फ़ूर भाई ने सुबह ले दिया था; यह लो अम्मीजान।

(जिन्नत को गोद में उठाकर गुलनार दूध पिलाती है)

गुलनार—पियो, मेरी बच्चो, आँखें खोलो; कोई डर नहीं—तुम मेरी गोदी में लेटी हो।

जिन्नतउन्निसा—आह—कौन हैं आप मेरी जान बचानेवाली ! क्या मेरी वालदा क़ब्र के अन्दर से वापस आकर मुझे अपनी गोद में दूध पिला रही हैं ! अम्मीजान—अम्मीजान—ज़रा और—बड़ी प्यास—बड़ी प्यास !

अज़ीमन—अम्मीजान, ये आपको अम्मीजान कहकर बुला रही हैं। कौन हैं ये !

गुलनार—तुम्हारी हमशीरा।

मीर क़ासिम—या रहीम रहमतुल्ला—तूने अपना रहम बदक़िस्मत मरदों को न देकर क्या औरतों के दिल के अन्दर छिपा रक्खा है जिनके पाक हाथ मौत को भी शिकस्त दे सकते हैं? शायद इसी लिए दर्द भरी दुनिया में, मुसीबत के दिनों में तेरा रहम सिर्फ़ सच्ची असमतवाली औरतों के जिगर के अन्दर से बहने लगता है।

गुलनार—अब कोई डर नहीं है, बच्ची की आँखें खुल गईं। आप फ़िक्र न करें, नवाब साहब!

मीर क़ासिम—चुप, नवाब साहब नहीं। 'नवाब' के नाम से मुझे अब नफ़रत है। इस वक़्त से मैं हूँ सिर्फ़ 'इन्सान'। सिर्फ़ एक इन्-सान की तरह हम रहेंगे, महलों और कोठियों में नहीं। ग़रीब किसान की टूटी-फूटी झोपड़ी के अन्दर मैं, तुम और ये दोनों बच्चे। ऐयाशी का नशा, बड़प्पन का घमंड पैरों के तले कुचलकर—भूखे, मुसीबतज़दा ग़रीबों के अन्दर ज़िन्दगी की पहली बातों को भूलकर सिर्फ़ इस फ़ख़ को लेकर हम ज़िन्दा रहेंगे कि हम इन्सान हैं—। जिन पर हुकूमत की है—उन्हीं की तरह इनसान्—और ग़फ़ूर!! इन्सानों के भीतर एक फ़रिश्ता वफ़ादार—ईमानदार मुझे पनाह देनेवाले! आज तुम्हारे ही फ़ज़ल—तुम्हारी ही नवाजिश से मेरी खोई हुई इज्ज़त, खोई हुई ख़ुशी मुझे इस बालू भरे मैदान में वापस मिली। और तुम मेरी बच्ची! तुम कौन हो! कहाँ जाओगी? चलो हम पहुँचा देंगे।

जिन्नतउन्निसा—मालूम नहीं कहाँ जाऊँगी। जङ्गलों में कई रोज़ से घूम रही हूँ। भीख कैसे माँगी जाती है, मालूम नहीं। पेट में दाना

नहीं। रात में नींद नहीं। चलते चलते थक गई। आपने आकर मेरी जान बचाई। फ़रमाइए, आप कौन हैं। मैं तो फ़िलहाल एक यतीम हूँ—जिसको न रहने का ठिकाना और न खाने का।

मीर क़ासिम—.खूब! यतीम का मददगार यतीम! तब तो ज़रूर तुम भी हमारी तरह मुसीबतज़दा......।

जिन्नतउन्निसा—रुहेलों के घर की लड़की! लड़ाई में सब किसी को खोकर रास्ते में भटक रही हूँ। इससे ज़्यादा मैं और कुछ नहीं कह सकती। मेहरबानी कर दरया.फ्त न कीजिए।

मीर क़ासिम—समझा! बहादुर रुहेलों के घर की बेटी—और आज पनाह माँग रही है मुझसे! ग़फ़ूर, ग़फ़ूर! गुलनार! क्या तुमने कभी सुना है कि बेईमान के .जुल्म से एक अजनबी की इज़्जत बचाने के लिए अपनी हरी भरी सल्तनत तक को कोई बहादुर .कुरबान कर सकता है! हाफ़िज़ रहमत मरहूम थे पठानों के सरताज, बहादुरों के वली—रहम के दरया और इज़्जत के पहाड़!

उन्हीं के अज़ीज़ बहादुर फ़ै.जुल्ला—कितना ऊँचा था उसका दिल! उसने कुछ न देखा देखा सिर्फ़ अपना ईमान! और उसी घर की साहबज़ादी, मेरी बच्ची।—गुलनार—खड़ी देखती क्या हो—गोद में उठा लो, सर पर चढ़ाओ, आँखों में रक्खो! कभी ख्वाब में भी न सोचा था कि ऐसी .खुशनसीबी मेरी हो सकती है। गुलनार, कौन कहता है कि हम बदक़िस्मत हैं—अल्लाह, अल्लाह—तेरा फ़ज़्ल--अल्लाहो अकबर, अल्लाहो अकबर।

ग़फ़ूर—रास्ते में आते आते रुहेलों की बरबादी का तमाम क़िस्सा सुना है। बेईमान बेवफ़ा दीवान की कार्रवाई से ही ऐसा हुआ।

मीर क़ासिम—बेईमान और बेवफ़ा हर जगह मौजूद हैं—अफ़सोस मैं इनकी जड़ न मिटा सका।

ग़फ़ूर—और सुना है हाफ़िज़ साहब की पोती को शुजाउद्दौला गिरफ़्तार करके ले गया है; लेकिन शैतान ने जब उस पर ज़ुल्म करने की कोशिश की तो बहादुर लड़की ने उसकी छाती में छुरी भोंक दी। ज़ालिम अभी मरा नहीं है। उसने हुक्म दिया है कि बदनसीब को चौक में खुले आम नंगा करके इसी छुरी से टुकड़े-टुकड़े करके काटा जाय।

जिन्नतउन्निसा—और फ़ैज़ुल्ला !

ग़फ़ूर—फ़ैज़ुल्ला क़ैद से फ़रार हो गया।

जिन्नतउन्निसा—अम्मीजान, आपने मेरी जान बचाई है। इसके लिए ज़िन्दगी भर आपकी शुक्रगुज़ार रहूँगी। अब मुझे रुख़सत होने की इजाज़त दीजिए। गुस्ताख़ी माफ़ फ़रमाएँ—उस बदनसीब औरत की दर्दभरी आवाज़ मुझे बुलाकर कह रही है—"बदला इंतक़ाम कैसे लिया जाता है, देख जा।" नहीं, मैं चुप नहीं बैठ सकती। अभी बेईमान दीवान जीता है ! पठान औरत ! चल-चल ! जल्दी चल !

(जाती है)

गुलनार—यह क्या ! कहाँ जा रही हो, मेरी बच्ची, कहाँ जा रही हो, सुनो !

मीर क़ासिम—ग़फ़ूर दौड़ो, रोको ! जोश में आकर दौड़ रही है, मगर उसके पैर काँप रहे हैं। अभी गिर पड़ेगी, फिर न उठ सकेगी।

(सब जाते हैं)

दूसरा दृश्य

फ़ैज़ाबाद—रास्ता

शहरवाले

पहला—ज़रूर दुश्मन का ख़ुफ़िया।

दूसरा—नहीं नहीं; हाफ़िज़ रहमत की पोती—पठान की लड़की; देखा बदला !

पहला—सुना है, फ़ैज़ुल्ला भी फ़रार हो गया है !

दूसरा—भीतर मामले में कुछ गड़बड़ मालूम होता है। भागा कैसे !

पहला—कोई कहते हैं भागा नहीं है, बड़ी बेगम ने रिहा कर दिया है।

दूसरा—यह ग़लत ख़याल है।

पहला—अच्छा तो उसे चौक में ले जाकर इस तरह क़त्ल करने की क्या ज़रूरत थी ? वहीं ख़त्म कर सकते थे !

दूसरा—सबक़ देने के ख़याल से कि तमाम शहर देखे और डरे और आगे कोई ऐसी हिम्मत न करे।

पहला—सबक़! अरे म्याँ, रहने भी दो। नवाबी ख़याल है जो जी में आया कह दिया। कुत्तों से नुचवा दो, काट काट कर नमक छिड़क दो··यह कर दो...वह कर दो।

दूसरा—इसको, सुना है, कमर तक मिट्टी में गाड़ दिया जायगा और हर रोज़ जिस्म का कोई न कोई हिस्सा काट लिया जायगा, आँख, कान, उँगली, हाथ··

पहला—नवाब की छाती में छुरी—कोई मामूली बात थोड़े ही है!

दूसरा—नवाब की मौत तो नहीं हुई। मामूली चोट आई है।

पहला—वह-वह-वह जा रहे हैं।

दूसरा—अरे हाँ म्याँ, ठीक वही मालूम होती है। चलो मज़ा देखें।

(ज़ंजीरों से जकड़ी हुई छाया को लेकर पहरेदार आते हैं)

पहरेदार—हट जाओ, हट जाओ।

छाया—कोई न हटना, कोई न जाना। चलो, चलो, सब साथ में चलो। तमाशा देखो—नवाब का ज़ुल्म देखो; आज मैं, कल तुम—कोई न बचेगा! मेरा क्या? मैंने बदला ले लिया। हाः हाः हाः हाथ पकड़ा था—ज़हरीली छुरी से उसी का बदला! ऐ भेड़ो, ऐ बकरो! चलो, देखने चलो। आज मेरी पारी है, कल तुम्हारी आयगी। तुम न देखोगे तो देखेगा कौन! अगर तुम जैसे मर्द पैदा न होते तो यह मज़ा कहाँ दिखाई देता?

पहरेदार—अरी, चिल्लाती क्यों है ?

छाया—नमकहलालो, हुक्म बजाओ। पैसा खाया है और हुक्म पूरा नहीं करोगे ? अपने दीनवालों की छाती में छुरा भोंक दो, घर की बहू-बेटियों का हाथ पकड़कर उन्हें महल में दे आओ ! घरों में आग लगा दो ! भूखों के मुँह की रोटी छीन लो ! समझे ? पैसा मिला है न, नमक-हलाल नौकर !

दूसरा—कमर तक गाड़कर हरामज़ादी की जीभ पहले काट लेना जिससे ज़बान न चला सके।

पहला—हाँ हाँ मियाँ, ठीक है।

दूसरा—(छाया को) अरी, चिल्ला मत।

छाया—चलो चलो हिन्दुओ, मुसलमानो, इस जगह की रोटी खाकर जीनेवालो, इस जगह का पानी पीकर प्यास बुझानेवालो, यहाँ की कमाई से ऐश करनेवालो, सब चलो। यहाँ की ग़रीब लड़कियों पर अत्याचार होते देखो। मुझ पर अत्याचार, देश पर अत्याचार, तुम्हारे लिए गौरव की बात है। हाः हाः हाः मैंने बदला ले लिया, अब मुझे कोई अफ़सोस नहीं।

(फ़ैज़ुल्ला अचानक आकर छाया को गोली मार देता है)

फ़ैज़ुल्ला—अफ़सोस न तुमको है और न अब मुझको। बदनसीब जिन्नतउन्निसा, इस तौहीन और ज़ुल्म से मैंने तुम्हें छुटकारा दे दिया।

शहरवाले और पहरेदार—यह क्या ख़ून—ख़ून ! पकड़ो, पकड़ो।

(एक सिपाही आता है)

सिपाही—अभी मेरे जोड़ीदार को मार कर बंदूक छीन लाया है। डाकू, डाकू, पकड़ो !

फ़ैज़ुल्ला—किसकी मजाल है ?

(पानी में कूद पड़ता है)

पहला पहरेदार—ओफ् ख़ूब बच गये।

छाया—कौन हो देवता तुम, जिसने मुझे बचाया ?

(लक्ष्मीप्रसाद आता है)

लक्ष्मी०—नवाब बहादुर ने सज़ा वापस ले ली है; मैं हुक्मनामा लेकर आया हूँ। ठहरो।

पहला पहरेदार—ठहरें क्या, इधर मामला ही साफ़ है।

लक्ष्मी०—अरे यह क्या, किसने मारा है ?

पहला पहरेदार—मारनेवाला पानी में ग़ोता लगाकर ग़ायब हो गया।

छाया—बहुत जली हूँ ! बहुत जली हूँ ! आज शान्ति मिली। श्रीरामचन्द्रजी के देश की कन्या मैं, पिता विठ्ठलदास न जाने अब भी जीते हैं या नहीं—भाई घर छोड़कर, लापता—पता नहीं जीता है या मरा ! अगर कोई हिन्दू यहाँ हो तो कृपा करके मेरी बात सुने। मेरी देह सरजू नदी में डाल देना।

लक्ष्मी०—कौन—विठ्ठलदास की लड़की ! दुलारी ! दुलारी !

छाया—अब दुलारी नहीं, हाथ पकड़ने के साथ ही दुलारी मर गई। दुलारी नाम डूब गया! अब उसकी छाया प्रेतात्मा!

लक्ष्मी०—बहन बहन, पहचान, देख मैं विठलदास का अभागा लड़का तेरा भाई लक्ष्मी। तू दस साल की थी, जब मैं घर छोड़कर···

छाया—कौन भैया! तुम-तुम—आह पिताजी से कहना मैंने बदला ले लिया। जय सीताराम—सीताराम (मृत्यु)

दूसरा पहरेदार—अजी लक्ष्मी, यह आपकी कौन है? नवाब साहब से हुक्म लाये हैं कि सज़ा मौक़ूफ़ की जाय—लेकिन देखा न? डाकू ने आकर मार डाला। सरकार में आपको गवाही देनी पड़ेगी कि इसमें हमारा कोई क़ुसूर न था।

लक्ष्मी०—ज़रूर गवाही दूँगा। तुम्हारा कोई क़ुसूर नहीं है। अच्छा अब तुम लोग जाओ, मैं सरकारी हुक्म लेकर इसका आख़री इंतज़ाम करूँगा।

पहला पहरेदार—देखिएगा ज़रा, कहीं हम लोगों पर कोई आफ़त न आये।

(पहरेदार जाते हैं)

पहला श०—क्या हुआ—ऐं—यह तो हिन्दू है। फिर हाफ़िज़ रहमत की पोती कैसे हुई!

दूसरा श०—अरे रहने भी दो, जो राम वही रहीम। गड़बड़ करना ठीक नहीं। आज का दिन ही ख़राब हुआ।

(शहरवाले जाते हैं)

लक्ष्मी०—रहमत की पोती ? कुछ समझ में न आया। घर बार छोड़े मुद्दत हो गई। मुसाहबी कर रहा था। मेरी ही बहन ने नवाब की छाती में छुरी भोंक कर अपनी जान खोई ! इसकी हत्या किसने की ? दुलारी दुलारी, मेरी प्यारी बहन आ, सरजू में तेरी देह को निमज्जित कर आज से ग़ुलामी के काम से इस्तीफ़ा······।

तीसरा दृश्य

फ़ैज़ाबाद—दरबार

मुर्तज़ा ख़ाँ और हैदर बेग

हैदर बेग—क्या समझे ?

मुर्तज़ा ख़ाँ—समझना दुश्वार है। नवाब साहब का दिमाग़ ख़राब हो रहा है। ख़ुद ही उसके क़त्ल का हुक्म दिया और ख़ुद ही हुक्म वापस भी लिया।

हैदर बेग—हमेशा से ही मिज़ाज ऐसा ही रहा। बक्सर की लड़ाई के वक्त हम पर पूरा शुबह हो गया था। सोचा था हम दोनों को सख्त सज़ा भुगतनी पड़ेगी, मगर देखा न ? एकदम चुप्पी साध गये।

मुर्तज़ा—हमारे ख़िलाफ़ कोई सुबूत भी तो नहीं था।

हैदर बेग—उससे क्या बिगड़ता ! मेरा ख़याल है, सब बड़ी बेगम की सलाह थी। बहुत ही अक़्लमंद औरत है। अगर नवाब साहब उनकी बात मान कर चलते तो आज यह नतीजा हासिल न होता।

मुर्तज़ा—चाहे जो कहो, मगर औरत की अक़्ल से काम करना ख़तरनाक भी कम नहीं। सुना है न? फ़ैज़ुल्ला को बड़ी बेगम ने ही रिहा कर दिया। शहर में कौन ऐसा है जो इस बात को नहीं जानता? फिर देखो, न मालूम किसने इस लड़की को गोली से मार दिया—उसका भी कुछ पता नहीं। हाफ़िज़ रहमत की पोती रास्ते ही में ग़ायब हो गई। बहुतों का ख़याल है कि वह फ़ैज़ाबाद में ही कहीं छिपी है। अन्दर अन्दर न मालूम क्या हो रहा है। कुछ पता नहीं लगता। सब इस वक़्त नवाब साहब के लिए ही हैरान हैं और अब उनका बचना दुश्वार है। तकलीफ़ भी बहुत उठा रहे हैं। सारा जिस्म सड़ गया है—गोश्त के टुकड़े गल गलकर गिर रहे हैं; बदबू से घर में घुसा नहीं जाता।

हैदर बेग—ग़ुलाम और बाँदी तक ख़िदमत करने से इनकार कर रही हैं। सिर्फ़ बड़ी बेगम दिन रात उनकी ख़िदमत कर रही हैं।

मुर्तज़ा—इसमें भी मतलब है।—उन्हें डर है कि कहीं ऐसा न हो कि मरते वक़्त तख़्त उनकी औलाद आसफ़अली को न देकर दूसरी बेगम की औलाद सादत अली को नवाब साहब दे डालें।

हैदर बेग—नहीं, मुझे तुम्हारी राय से इत्तफ़ाक़ नहीं। ऐसी ख़िदमत सिर्फ़ ख़ुदग़रज़ी से करना मुमकिन नहीं।

मुर्तज़ा—ग़रज़ इन्सान से सब कुछ करा सकती है।

हैदर बेग—शहर के तमाम लोग अमीर-उमराव सभी सोच रहे हैं क्या होनेवाला है लेकिन तुम्हारे लिए तो भलाई इसी में है कि आसफ़ुद्दौला नवाब हो, क्योंकि वह तुम्हें बहुत मानता है।

मुर्तज़ा—देखो, क्या रङ्ग खिलता है। इस तरह बेसब्री से दिन गिनते-गिनते तो थकान आ जाती है। जो होना हो वह जल्दी हो जाय तो अच्छा है।

(आसफ़उद्दौला आता है)

आसफ़उद्दौला—आप यहाँ हैं, मैं आप ही की तलाश कर रहा था। नवाब साहब की हालत बहुत ख़राब है। मैं तो मारे बदबू के उस कमरे में घुस न सका। सआदतअली फिर भी कभी-कभी अन्दर जा रहा है—वह हकीम के पास गया है, मैं आपको ख़बर देने आया हूँ।

मुर्तज़ा ख़ाँ—वक़्त बहुत नाज़ुक है। सआदतअली का बार-बार नवाब के पास आना-जाना मतलब से ख़ाली नहीं है।

आसफ़उद्दौला—सब बरबादी की जड़ हैं मेरी वालदा। बराबर वे अब्बा को नाराज़ करती रहीं। अगर उस नाराज़गी के ख़याल से कहीं मुझे तख़्त से महरूम किया जाय तो कोई ताज्जुब नहीं।

हैदर बेग—हम भी यही सोच रहे थे।

आसफ़उद्दौला—अगर कहीं ऐसा ही किया तो हम उनके हुक्म की कोई परवा न करेंगे। मैं बग़ावत करूँगा। क़ानूनन् तख़्त का वारिस मैं हूँ; क्योंकि एक तो मैं पहली औलाद हूँ और मेरी वालदा ही बड़ी बेगम हैं। आप दोनों इस सल्तनत के ख़ास दो पाये हैं। मुझे उम्मीद है कि आप मेरा साथ देंगे।

मुर्तज़ा खाँ—मैं तलवार की क़सम खाकर कहता हूँ—या कहिए, क़सम क़ुरान शरीफ़ कहता हूँ कि आख़िर दम तक मैं आपके साथ हूँ। चाहे क़िस्मत में कुछ भी बदा हो।

हैदर बेग—मुझे भी पूरा इत्तफ़ाक़ है। नवाब साहब की मौत के बाद वज़ीरों में ज़रूर नाइत्तफ़ाक़ी होगी; क्योंकि सआदतअली कम चालाक नहीं है, उसने भी ज़रूर बहुतों को मिला लिया होगा।

आसफ़उद्दौला—ख़ामोश, सादतअली आ रहा है।

(सआदतअली आता है)

मुर्तज़ा और हैदर—सलाम नवाबज़ादे साहब !

सआदतअली—तसलीम। बड़े हकीम साहब अभी वालिद साहब को देख गये हैं। उनका कहना है कि शायद ही आज का दिन कटे। बड़ी बेगम साहिबा का हुक्म है—ख़ास वज़ीरों को छोड़कर अभी इस ख़बर को आम न किया जाय। तख़्त के बारे में अभी तक नवाब साहब ने आख़री मन्शा ज़ाहिर नहीं की है। सब हैरान हैं। नवाब साहब ने आप सबको तलब किया है। उन्हीं के हुक्म से मैं आपको ख़बर देने आया हूँ।

मुर्तज़ा खाँ—तशरीफ़ ले चलिए, हम अभी ख़िदमत में हाज़िर होते हैं।

सआदतअली—(आसफ़ को) भाई जान, आप भी देर न कीजिएगा।

(जाता है)

हैदर बेग—कुछ समझे ?

आसफ़उद्दौला—.खुश मालूम होता है !

मुर्तज़ा खाँ—क्या नवाब साहब की मन्शा उसे मालूम हो गई ?

आसफ़उद्दौला—चाहे जो करें, अगर तख्त से मुझे मायूस रक्खा तो मैं ख़ामोश न रहूँगा। आप अभी वज़ीरों और उमराओं से सलाह कर दरबार का इन्तज़ाम कीजिए। नवाब साहब की लाश कब्र में जाने के पेश्तर ही मैं तख्त पर बैठूँगा। उनकी मौत की ख़बर ज़ाहिर होने के पेश्तर ही हम ऐलान करेंगे कि नवाब साहब ने मुझे तख्त पर बैठने इजाज़त दे दी है।

मुर्तज़ा खाँ—यही अक्लमन्दी का काम होगा।

हैदर बेग—तब सआदतअली को पहले ही गिर.फ्तार करना होगा; जिससे वह बग़ावत न कर सके।

मुर्तज़ा खाँ—अभी उतना बढ़ना ठीक नहीं। (स्वगत) दोनों को हाथ में रखना पड़ेगा। न मालूम कौन नवाब हो। पहले से सआदतअली को नाराज़ कर देना ठीक नहीं। (प्रकट) तब चलिए, देर करना मुनासिब नहीं।

आसफ़उद्दौला—सिर्फ़ वालदा के सबब इतनी फ़िक्र करनी पड़ी। बराबर वे नवाब साहब के ख़िलाफ़ रहीं।

मुर्तज़ा खाँ—इसमें क्या शक ?

(सब जाते हैं)

चौथा दृश्य

सरजू नदी के किनारे

[फ़ैज़ुल्ला]

फ़ैज़ुल्ला—अपने हाथ से ख़तम कर दिया; लेकिन ख़ुद अभी ज़िन्दा हूँ—क्यों ? किस उम्मीद पर ? मरने में अब कोई अफ़सोस नहीं। मरने से पहले—जिन्नत—जीते जी उसे कलेजे से न लगा सका। मेरे ही ज़ालिम हाथों का शिकार वह कुम्हलाया हुआ फूल ! अगर मालूम हो जाता कि कहाँ वह दफ़नाई गई है तो कब्र में से उठाकर उस नाज़ुक चेहरे को एक दफ़े देखता—कलेजे से लगा लेता ! बस, सिर्फ़ इसी उम्मीद पर भटक रहा हूँ। मगर कौन बतायेगा कि जिन्नत का मज़ार कहाँ है ?

(गाते हुए लक्ष्मीप्रसाद आता है)

गीत

दुनिया की यह रीति।
आया है जो नहीं रहेगा, मन फिर क्यों यह भीति ?
यह सराय है हम हैं मुसाफ़िर,
कभी छिपे हैं कभी हैं ज़ाहिर,
आना जाना, मरना जीना, दो दिन की सब प्रीति।

फ़ै.ज़ुल्ला—यह भी कोई मेरी तरह बदनसीब है—अफ़सोस के साथ रोता हुआ गा रहा है। मगर न मुझसे रोया जाता है और न गाया जाता है।

लक्ष्मी०—कौन इस अँधेरे में दीवाने की तरह घूम रहा है?

फ़ै.ज़ुल्ला—तुम कौन हो? क्या तुमने देखा है! देखा है?

लक्ष्मी०—आँखें जब कपार पर मौजूद हैं तो ज़रूर देख लिया है।

फ़ै.ज़ुल्ला—बतला सकते हो, जिस लड़की को सुबह एक शख़्स ने गोली मारी थी, वह कहाँ दफ़नाई गई है?

लक्ष्मी०—दफ़नाई गई है? वह तो मुसलमान नहीं, हिन्दू थी। तुम उसकी बात क्यों पूछ रहे हो?

फ़ै.ज़ुल्ला—हिन्दू थी! झूठा कहीं का!

लक्ष्मी०—जब जाति में हिन्दू हूँ—पेशा नौकरी—फ़ख़ ग़ुलामी का—ख़ुशी शराब में तब ज़रूर झूठा—सौ बार झूठा हूँ। उसके लिए कोई दुःख नहीं। परन्तु फिर भी बात सच्ची है। वह हिन्दू की लड़की थी; मुसलमान की नहीं। दफ़नाया नहीं, मैंने अपने हाथों उसे सरजू नदी में बहा दिया है।

फ़ै.ज़ुल्ला—क्या कह रहे हो! क्या वह जिन्नत न थी? बोलो, क्या वह जिन्नत न थी? तब मैंने किसका ख़ून किया?

लक्ष्मी०—मेरी बहन—दुलारी का।

फ़ै.ज़ुल्ला—तुम्हारी बहन! मेरी जिन्नत नहीं? मुझको पकड़ो। मैं गुनहगार हूँ—क़ातिल हूँ—सज़ा पाने का मुस्तहक़ हूँ। मुझको गिरफ़्तार करा दो, मैं फ़रार असामी फ़ैज़ुल्ला हूँ। बहुत इनाम हासिल करोगे। मैंने जिन्नत समझकर तुम्हारी बहन को मार डाला।

लक्ष्मी०—तुम फ़ैज़ुल्ला हो ? हाँ हाँ, ठीक ही तो है ! बक्सर की लड़ाई में तुमको देखा था। मीर क़ासिम को तुम्हीं ने पनाह दी थी। तुम फ़रार हो; गिरफ़्तारी के लिए हुलिया निकाला गया है। हाँ, मालूम है। जिन्नत समझकर तुमने जिसे मारा है, वह मेरी ही बहन थी। मगर तुमने उसे मारा नहीं है—दुनिया की बेइज़्ज़ती से बचाया है। मैं मुसाहब हूँ, शराबी हूँ। पहचान की हो या अनजान, मेरी ही जाति की लड़की, मेरी ही बहन—उसकी सरे-आम बेइज़्ज़ती की जा रही थी, तुमने उसको मार कर, इस बेइज़्ज़ती से बचा लिया। मैं होता तो क्या करता ! खड़ा-खड़ा देखता। और कुछ करने की हिम्मत तो न थी। असल भाई का काम तो तुमने किया है—फिर यह अफ़सोस क्यों ?

फ़ैज़ुल्ला—मगर तब जिन्नत कहाँ है ? उसका क्या हुआ ? जिन्नत के बदले तुम्हारी बहन महल में क्यों कर आ गई ?

लक्ष्मी०—यह मसला अभी मेरी समझ में भी नहीं आया। समझने की कोशिश भी नहीं की। डरते-डरते लाश को लाकर नदी में बहा दिया।

फ़ैज़ुल्ला—तुम हो कौन ?

लक्ष्मी०—ग़रीब का लड़का, जाति से राजपूत। बाप किसान। मालगुज़ारी जब बाप न दे सके तो ज़मींदार के आदमी पकड़ ले गये। उनको मारा पीटा, मैं खड़ा-खड़ा देखता रहा। अपमान से पिताजी मुँह तक न उठा सके। मैं उस अफ़सोस में घर से बाहर निकल गया और साधु की तरह घूमने लगा। मेरी उम्र उस समय सोलह वर्ष की थी—मेरी बहन थी दस साल की।

फ़ैज़ुल्ला—यहाँ कैसे आये ?

लक्ष्मी०—बहुत बड़ा क़िस्सा है। आगरा पहुँचा; मन के माफ़िक़ साथी मिल गये, थोड़ा सा गाना-बजाना आता था, एक तवायफ़ का तबलची बना। इसके बाद घूमता-फिरता शुजाउद्दौला के यहाँ मुसाहबी करने की नौकरी मिली। तब से यही हाल है—पीता खाता हूँ और मुसाहबी करता हूँ।

फ़ैज़ुल्ला—क्या कभी घर वापस नहीं गये ?

लक्ष्मी०—नहीं। सोचा था जो दो रोज़ जीना है, ऐसे ही अँधेरे में बिता देंगे। मगर भाग्य ऐसा था कि मरती हुई बहन को देखा, जिसने नवाब की छाती में छुरा भोंका था।

फ़ैज़ुल्ला—छुरा क्यों भोंका था ?

लक्ष्मी०—क्या कहूँ ? मरते वक़्त दुलारी ने कहा, नवाब ने उसका हाथ पकड़ा था, उस पर अत्याचार किया था। और मैं इतने दिनों से उसी की ग़ुलामी कर रहा हूँ।

फ़ैज़ुल्ला—अब कहाँ जाओगे ?

लक्ष्मी०—एक बार गाँव को जाऊँगा। देखूँ बूढ़ा बाप ज़िंदा हो तो कह दूँगा कि दुलारी ने बदला ले लिया। मैं उसका भाई मर्द होकर भी कुछ न कर सका। अच्छा, तुम भागो, तुम्हारा हुलिया निकला है।

फ़ैज़ुल्ला—तुम्हारा गाँव कहाँ है ?

लक्ष्मी०—बरार में।

फ़ैज़ुल्ला—कमज़ोर पर ताक़तवर का यह ज़ुल्म ! क्या इसका कोई इलाज नहीं ? जिस क़ौम की लड़की ज़ुल्म का इंतक़ाम ले सकती है, उस

क़ौम का मर्द क्या छिपकर अपनी जान बचायगा मौत की फ़ेहरिस्त बढ़ाने के लिए ! मालूम नहीं जिन्नत कहाँ है ! पर ऐसी कितनी जिन्नतों पर रोज़ ज़ुल्म हो रहे हैं कौन कह सकता है ? चलो दोस्त, आज से सल्तनत नहीं, तख़्तो-ताज नहीं, आज से इस मुल्क के ग़रीब और सताये हुए बदनसीब हमारे भाई हैं। ज़ालिम के हाथों सताई हुई औरतें—चाहे हिन्दू हों या मुसलमान—मेरी हमशीरा हैं। चलो, आज से ग़रीबों की सोहबत में उनके दिल से दिल मिलाकर, उनके दर्दे-दिल को अपना दर्दे-दिल समझकर ग़रीबों की ही मदद से हम ज़ालिमों से अपना इंतक़ाम लेंगे।

लक्ष्मी०—चलो, मैं शराबी हूँ—देखूँ, शायद तुम्हारे साथ रहते रहते मेरी ख़ुमारी कट जाय।

(दोनों जाते हैं)

—

पाँचवाँ दृश्य

फ़ैज़ाबाद—कमरा

[शुजाउद्दौला और बहू बेगम]

शुजाउद्दौला—उफ़्—अब बरदाश्त नहीं होता—बड़ी तकलीफ़—अब कितनी देर और है ?

बहू बेगम—अल्लाह—रहम—अल्लाह को याद कीजिए, वह तकलीफ़ मिटायेगा।

शुजाउद्दौला—याद कैसे करूँ—डर लग रहा है। वह छुरी लेकर खड़ी है।

बहू बेगम—यह सब न सोचिए, यही तो इन्सान की ज़िन्दगी है—या .खुदा मेरे शौहर की तकलीफ़ मिटा दे।

शुजाउद्दौला— क्या वह चली गई ?

बहू बेगम—कौन ? यहाँ तो कोई नहीं आया।

शुजाउद्दौला--हाँ, मैंने देखा है। तुमने नहीं देखा ? छुरी लेकर मारने आई थी—हूँ! मुझे मारेगी—मैं ठहरा नवाब ! उसकी क्या मजाल--तुम कौन हो ?

बहू बेगम—आपकी ख़ादिमा।

शुजाउद्दौला—कौन आमेतू। देखूँ, ज़रा अच्छी तरह देखूँ। नहीं, जाने को जी नहीं चाहता। बराबर तुम पर मैंने .ज़ुल्म किया है—इस चाँद से मुखड़े को कभी इस तरह देखा न था। लेकिन क्या करूँ—वक़्त क़रीब है, जाना ही पड़ेगा—काश फिर कहीं—.ख़ैर, एक अर्ज़ है—

बहू बेगम—फ़रमाइए।

शुजाउद्दौला—मुझे माफ़ करना। अगर फिर ज़िन्दगी वापस मिल जाती तो तुमको शायद .खुश कर सकता। और .खुद भी .खुश रहता।

बहू बेगम—मैं तो .खुश ही थी—आप क्यों इस तरह मेरी .खुशी छीनकर ले जा रहे हैं ! मैंने कितनी गुस्ताख़ियाँ कीं मगर आप सब मुआफ़ करते रहे। मैं फिर मुआफ़ी चाहती हूँ। अब कभी आपकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ न हूँगी। आप मुझे छोड़कर न जाइए। मैं क्या लेकर रहूँगी !

शुजाउद्दौला—आसफ़ रहा—वज़ीरों को बुलाओ। मैं जीते जी यह मसनद उसको देता जाऊँ।

बहू बेगम—उसके लिए क्या जल्दी है। आप ज़रूर चङ्गे हो जायेंगे।

शुजाउद्दौला—चङ्गा! अभी से इन्तज़ाम कर जाऊँ, नहीं तो मालूम नहीं... ।

बहू बेगम—अगर यही ज़रूरी हो तो मेरी गुज़ारिश है कि आप फ़ैज़ाबाद की मसनद सआदतअली को दीजिए।

शुजाउद्दौला—मालूम होता है, तुमने मुझे अभी तक माफ़ नहीं किया। आसफ़उद्दौला मेरा अव्वल औलाद—इस मसनद का हक़ीक़ी मालिक, ख़ास कर मेरी बड़ी बेगम का साहबज़ादा...

बहू बेगम—नहीं, मुझे कोई नाराज़गी—अल्लाह जानता है—मुझ पर यक़ीन कीजिए मैं सल्तनत की ख़ैरख़्वाही देखते हुए ही यह अर्ज़ कर रही हूँ...

शुजाउद्दौला—नहीं, नहीं, मुझे अब न सताओ; मुझे माफ़ करो। मैंने तुम्हारे ऊपर बहुत ज़ुल्म किया है। कहाँ हैं वज़ीर, अभी तक नहीं आये?

बहू बेगम—अभी आते होंगे, आप इतमीनान रक्खें।

शुजाउद्दौला—हाँ इतमीनान है—लेकिन कभी-कभी—वह छुरी लेकर खड़ी है—मारने आ रही है—कब किस वक़्त कौन सा गुनाह किया है—वह—वह घूम रही है—ज़हरीली छुरी—हवा-हवा—

बहू बेगम—या अल्लाह, अब तो इनकी तकलीफ़ देखी नहीं जाती।

(आसफ़उद्दौला, सआदतअली, हैदर बेग, मुर्तज़ा आते हैं)

आसफ़उद्दौला—(स्वगत) उँह कितनी बदबू (नाक में रूमाल लगाता है) (प्रकट) अम्मीजान, वालिद साहब का क्या हाल है ?

बहू बेगम—ज़रा चुप हैं। अभी सबको तलाश कर रहे थे। इस वक्त शायद हुज़ूर सो रहे हैं।

मुर्तज़ा—आपका ख़याल क्या है ?

बहू बेगम—ख़ुदा हाफ़िज़ है।

आसफ़उद्दौला—क्या मसनद के बारे में कुछ इरशाद फ़रमाया ?

बहू बेगम—सआदतअली, ज़रा तुम हकीम साहब को फिर ख़बर करो।

सआदतअली—जो इरशाद !

(जाता है)

बहू बेगम—आसफ़ के साथ आप ज़रा इधर आइए. मुझे कुछ अर्ज़ करनी है।

(नवाब के पलँग से कुछ दूर पर सब खड़े होते हैं)

आसफ़उद्दौला—इरशाद ?

बहू बेगम—बेटा, तुमसे मेरी सिर्फ़ एक यही गुज़ारिश है। क्या मैं उम्मीद कर सकती हूँ कि मेरे शौहरजी अब आख़िरी साँस लेना ही चाहते हैं, उनके सामने मेरी अरज़ी तुम मंज़ूर करोगे ?

आसफ़उद्दौला—फ़रमाइए।

बहू बेगम—तुम इस मसनद को मंज़ूर न करो !

आसफ़उद्दौला—मंज़ूर न करूँ! क्यों? क्या वालिद साहब मसनद सआदतअली को देना चाहते हैं?

बहू बेगम—नहीं, यह मेरी ख़्वाहिश है। उनकी ख़्वाहिश है कि उनके जीते जी तुम्हीं मसनद पर बैठो। लेकिन मैं यह बेहतर समझती हूँ कि सआदतअली नवाब बने।

आसफ़उद्दौला—मगर यह मुनासिब नहीं! आप मुझसे ऐसी फ़रमाइश न करें। मैं ही दरअसल इस मसनद का असली मालिक हूँ।

बहू बेगम—मेरे बच्चे, सब्र के साथ सोचो। तुम्हारे वालिद साहब सो रहे हैं। मैंने तुम्हारी भलाई और सल्तनत की भलाई के ख़याल से ही यह बात कही है। वज़ीर साहबान, आप अक्लमन्द हैं—फ़ैज़ाबाद या अवध की भलाई को मद्दे नज़र रखकर, क्या यह बेहतर न होगा कि सआदतअली ही नवाब बने? और आसफ़उद्दौला, इसमें तुम्हारी भी भलाई है।

आसफ़उद्दौला—मेरी भलाई?

बहू बेगम—हाँ, तुम्हारी भलाई। तुम मेरी औलाद हो। मैं तुम्हें जानती हूँ। मसनद पर बैठने की क़ाबिलियत तुममें नहीं है। तुम नाराज़ न होना—हर शख़्स को हर चीज़ की क़ाबिलियत नहीं रहती। मगर सआदतअली गरचे तुमसे कुछ छोटा है मगर इस मामले में तुमसे ज़्यादा होशियार है। चारों तरफ़ मुसीबत है, चारों ओर दुश्मन हैं; इस वक्त फ़ैज़ाबाद की मसनद तुम्हारे लिए भलाई का बायस न होगी। मेरी ख़्वाहिश है कि तुम सआदतअली की बग़ल में बैठकर उसकी इमदाद

करो। इसी में अवध की। भलाई है वज़ीर साहबान, आपकी क्या राय है ?

मुर्तज़ा ख़ाँ—जी, कुछ समझ में नहीं आ रहा है।

आसफ़उद्दौला—समझा, मैं आपकी औलाद नहीं। अब तक सिर्फ़ आप मुझे धोखा देती रहीं! यह मसनद मेरी है—मैं इसकी उम्मीद छोड़ नहीं सकता! मुर्तज़ा ख़ाँ, हैदर बेग, आप अभी दरबार हाज़िर करें। मैं वालिद साहब के जीते जी मसनद पर बैठूँगा।

शुजाउद्दौला—कौन ? प्यारी आमेतू! कहाँ हो ?

बहू बेगम—हाज़िर हूँ, सरकार! (पास जाती है)

शुजाउद्दौला—क्या अभी तक वे नहीं आये ?

बहू बेगम—सब हाज़िर हैं, लेकिन हुज़ूर मेरी अरज़ी—

शुजाउद्दौला—नहीं नहीं, बेगम तुम मुझसे नाराज़ हो। तुम अब तक नवाब की बेगम थीं, अब तुम नवाब की वालदा हो। आसफ़ आसफ़!

आसफ़उद्दौला—अब्बाजान!

शुजाउद्दौला—वज़ीर साहबान कहाँ हैं ?

आसफ़उद्दौला—ख़िदमत में सब हाज़िर हैं।

शुजाउद्दौला—आज से मसनद तुम्हारी है। आमेतू, तुम्हारा क़र्ज़ अदा हो गया। बेगम, कहाँ हो ?

बहू बेगम—हाज़िर हूँ सरकार।

आसफ़उद्दौला—आप सब ने वालिद साहब का हुक्म सुना ?

मुर्तज़ा ख़ाँ और हैदर बेग—जी हाँ।

(सआदतअली और हकीम आते हैं)

सादतअली—अम्माजान, वालिद साहब की हालत !

बहू बेगम—अल्लाह मालिक हैं ।

हकीम—अब ज़्यादा देर नहीं है ।

सआदतअली—अब्बाजान, अब्बाजान, हमको छोड़कर आप कहाँ जायेंगे !

शुजाउद्दौला—किसने आवाज़ दी ?

सआदतअली—मैं हूँ सआदतअली ।

शुजाउद्दौला—ख़ुश रहो—आमेन्—अल्लाह ! (मृत्यु)

बहू बेगम—हाय ख़ुदा—हाय अल्लाह !

मुर्तज़ा ख़ाँ—बाँदी, बाँदी ! बेगम साहबा को सँभालो ।

आसफ़उद्दौला—वालिद साहब क़ज़ा कर गये—इसी वक्त से तख्तोताज का मालिक मैं हूँ । अवध और फ़ैज़ाबाद के नवाब का पहला हुक्म आप सुनिए—मैं सआदतअली की गिरफ्तारी का हुक्म देता हूँ । मेरी वालदा भी उसकी तरफ़दार हैं । ऐसी हालत में, सल्तनत में अमन और चैन में जिससे ख़लल न पड़े इसलिए ऐसा हुक्म देना, मेरे लिए मुनासिब है ।

सादतअली—तलवार इसका जवाब दे सकती थी, मगर सामने वालिद साहब की लाश का ख़ून शायद अभी ठंडा न हुआ होगा । आपके हुक्म का जवाब देना मेरे वालिद साहब की लाश की तौहीन होगी, इस ख़याल से भाई जान, मेरी तलवार अवध के नवाब के क़दमों पर पहली

निछावर है। मुझे यह गिरफ़्तारी मंज़ूर है। मगर आपका ख़याल ग़लत था, मुझे मसनद का लालच कभी न था।

बहू बेगम—ठहरो। आसफ़, अपनी नवाबी का पहला हुक्म अधूरा न छोड़ो। साथ में बदनसीब वालदा को भी गिरफ़्तार करो। शायद तुम्हारे वालिद की रूह अभी तक इस चहारदीवारी के बाहर नहीं गई है। वे जाने के पहले सुन जायँ कि सआदतअली अकेला नहीं, साथ में उसकी वालदा भी गिरफ़्तार हैं। मैंने ही इस मसनद को सआदतअली को देने की गुज़ारिश की थी। सआदतअली का कोई क़ुसूर नहीं। चलो सादतअली, मैं ही तुम्हारी बदनसीबी का बायस हूँ। चलो एक ही क़ैदख़ाने में बैठकर वालदा के दिल के प्यार से शायद तुम्हारी कुछ तकलीफ़ दूर कर सकूँ।

सआदतअली—वालदा साहबा, नवाबी मसनद से आपके दिल की मसनद कहीं बेश क़ीमत है। मैं ख़ुश-नसीब हूँ।

बहू बेगम—बेटा, बचपन में ही तुम्हारी वालदा का इंतक़ाल हो गया। अब तक अपनी छाती का ख़ून दो भूखे बच्चों को बराबर हिस्से में देती रही। आज शौहर के इंतक़ाल के साथ उन दो बच्चों में एक खो गया। चलो, अब तुम अकेले ही मेरी उस ख़ाली जगह को पूरा करो।

(सआदत के साथ जाती है)

आसफ़उद्दौला—चलिए—दफ़न के पहले ही दरबार का इन्तज़ाम किया जाय। यह मेरी वालदा नहीं दुश्मन है।

—

पाँचवाँ अङ्क

पहला दृश्य

बरार-किसानों का गाँव

[हिन्दू और मुसलमान प्रजा—फ़ैज़ुल्ला।]

विट्ठलदास—हमने ठीक पहचान लिया है—तुम्हीं हमारे राजा हो। हम और किसी को न मानेंगे—क्यों भाइयो! ठीक है न?

सब—हाँ, ज़रूर। तुम जो कहोगे, हम वही करेंगे, अपनी जान देंगे।

पहला—पहले उस पाजी दीवान को मारें, फिर देखें कितना बड़ा नवाब है, फ़ैज़ाबाद का!

फ़ैज़ुल्ला—तुम्हीं पर हमें भरोसा है; क्योंकि मेरे पास न सिपाही हैं, न रुपया है और न रसद।

विट्ठलदास—उसकी कुछ चिन्ता नहीं। सिपाही और नवाबों को पालता कौन है? हम गठरी लादकर उनके घर पहुँचा देते हैं और वे मज़े में मसनद पर बैठकर नवाबी करते हैं। हमारे ही खेत की फ़सल खाकर सिपाहियों के हाथों में ताक़त आती है। और फिर मौत तो एक रोज़ है ही। जहाँ बिस्तर पर पड़े-पड़े बीमारी से सड़कर मरते—वहाँ तलवार के नीचे मरेंगे—इतना ही तो फ़र्क़ है। इतने दिन तक डर से

हम चुप थे; क्योंकि हम ग़रीब हैं। लड़की ने रास्ता दिखा दिया है—उसने बदला ले लिया है। घर का खोया हुआ लड़का वापस आ गया है। अब क्या चिन्ता है?

(लक्ष्मीप्रसाद आता है)

लक्ष्मी०—नगर में आग लग गई है। बड़े-बड़े प्रधान लोग कह रहे हैं कि हम दीवान को मालगुज़ारी नहीं देंगे। फ़ैज़ुल्ला साहब लौट आये हैं, हम उन्हीं की तरफ़ से लड़ेंगे।

फ़ैज़ुल्ला—फिर भी हमें धीरे-धीरे आगे बढ़ना होगा। फ़ैज़ाबाद से फ़ौज आने के पेश्तर ही हमें दीवान को सज़ा देनी पड़ेगी। मैं बड़ों का भरोसा नहीं करता; तुम ग़रीब हो और मुझे तुम्हारा ही भरोसा है।

विट्ठलदास—बरार, बरोच और बरेली की रिआया सब तुम्हारे साथ हैं।

फ़ैज़ुल्ला—बरेली के सिपाही सब तुम्हारी तरफ़ से लड़ेंगे। मैंने गीत गाते-गाते उनको तुम्हारी हालत सुनाई—वे तो सब रो दिये। वे कहते हैं कि अली अहमद का लड़का फ़ैज़ुल्ला ही उनका राजा है। सूबेदार-जमादार सब तुमसे आकर मिलेंगे। हथियार और बारूद की कमी न होगी। अब चाहिएँ सिर्फ़ आदमी!

विट्ठलदास—उसके लिए कोई फ़िक्र नहीं। हमने ज़बान दी है। अमीरों की तरह हम झूठ नहीं बोलते। हम अपना सर देंगे। हम अपने कटे सरों के ऊपर तुम्हारी मसनद बिछायेंगे। तुमने हमारी लड़की

की इज़्ज़त बचाई। बूढ़ा हुआ तो क्या फिर भी राजपूत हूँ। हमारे राजपूत भाई सब तुम्हारे लिए जान देंगे।

लक्ष्मी०—अब तक नौकरी के नशे में झूम रहा था, तुम्हीं ने जगा दिया। मालिक की लातें खाकर मरा नहीं तो क्या, लड़ाई में ही मरूँगा।

फ़ैज़ुल्ला—तुम्हारी मेहरबानियों का क़र्ज़ा मैं कभी अदा न कर सकूँगा। अगर कभी इस ज़ुल्म का बदला ले सका—कभी अगर फिर मसनद हासिल भी की—तो भी मैं ग़रीबों की तरह झोपड़ी में ही दिन बसर करूँगा, महलों और कोठियों में नहीं।

लक्ष्मी०—वह सब प्रजा झुंड की झुंड आ रही है।

फ़ैज़ुल्ला—लक्ष्मीप्रसाद, तुम जाओ। उस पेड़ के तले सबको इकट्ठा करो। मैं वहीं आता हूँ।

विट्ठलदास—चलो-चलो, देखें वे क्या कहते हैं।

(सब जाते हैं)

—

दूसरा दृश्य

लखनऊ—आसफ़ का महल

[नर्तकियाँ गाती हैं]

गीत

ख़ुश रहें हमारे आसफ़ शाह
दिन दूना रुतबा बढ़े उनका, ऐसा करें अल्लाह!

सब रङ्ग से, सब ढङ्ग से सब जङ्ग से
हो फ़तह, हो फ़तह, हो फ़तह
प्यारा अपना आसफ़शाह
उनका कहना, क्या वल्लाह ।
आन के, बान के, शान के—वाह वाह वाह !
वाह वाह वाह !
वाह वाह वाह !

(सब जाती हैं)

(आसफ़ और मुर्तज़ा आते हैं)

आसफ़उद्दौला—क्या मुल्लाओं ने फ़तवे पर दस्तख़त कर दिये ?

मुर्तज़ा ख़ाँ—बिला दस्तख़त लिये क्या मैं छोड़नेवाला हूँ—उन्होंने फ़तवा दिया है कि आपकी वालदा के पास जो कुछ भी ज़र-जायदाद है, वह सब आपके वालिद साहब मरहूम की है, इसलिए उस पर आपका पूरा हक़ है। फ़र्क़ यही है कि यह जायदाद बड़ी बेगम साहबा ने बिनामी में अपने नाम लिखा रक्खी है। अगर आपको ज़रूरत पड़े तो आप उस ज़रो-जायदाद पर अपना क़ब्ज़ा कर सकते हैं। यह लीजिए फ़तवा।

आसफ़उद्दौला—मैं इसी का इन्तज़ार कर रहा था। आप तो मेरी वालदा के बरताव से वाक़िफ़ हैं। उन्होंने सोचा था कि सआदतअली को मसनद पर बिठा कर ख़ुद सल्तनत की बागडोर अपने हाथ रक्खेंगी। फिर भी मैंने कोई ख़राब बरताव उनके या सआदतअली के साथ नहीं किया।

उन्हें क़ैदख़ाने में नहीं रक्खा, बल्कि उनको अपने महल में ही रख छोड़ा है।

मुर्तज़ा ख़ाँ—सआदतअली और बड़ी बेगम साहबा को एक ही महल में क़ैद रखना शायद मुनासिब नहीं। इस तरह उनको हर तरह की सलाह और मशविरा करने का मौक़ा मिलता है।

आसफ़उद्दौला—ठीक है; लेकिन रियाया उनसे इतनी हमदर्दी रखती है कि मैं इससे ज़्यादा कड़ा इन्तज़ाम करने की हिम्मत नहीं करता। पर अब रास्ता बहुत कुछ साफ़ होता जाता है। दुश्मनों के साथ एक ही जगह रहना मुनासिब नहीं है; यह समझकर ही मैं मसनद फ़ैज़ाबाद से लखनऊ ले आया हूँ। मैं अपनी वालदा की जायदाद में हाथ न लगाता मगर लाचार हूँ, क्योंकि इस नये शहर को बनवाने में क़रीब चार करोड़ रुपये ख़र्च हो गये हैं। इसी लिए मुल्लाओं से फ़तवा लेकर मैं उनकी ज़ेरा-जायदाद पर क़ब्ज़ा करने को आमादा हुआ हूँ। आप मेरा यह हुक्म-नामा और फ़तवा लेकर जाइए और वालदा साहबा को दिखाइए। अगर उन्होंने राज़ी से दे दिया तब तो कोई झंझट ही नहीं......।

मुर्तज़ा ख़ाँ—अगर राज़ी न हुईं और रुकावट डाली?

आसफ़उद्दौला—आप ख़ज़ाना लूट लाइए। लेकिन होशियार! उनके साथ बाअदब बरताव हो।

मुर्तज़ा ख़ाँ—इस वक़्त ख़ज़ाने में जिस तरह रुपयों की कमी है, उसे देखकर मुझे गुज़ारिश करनी पड़ती है कि फ़ैज़ाबाद के ख़ुर्दमहल का ख़र्च, जो दस लाख रुपये माहवार का है, बन्द कर दिया जाय। यह फ़िज़ूल का ख़र्चा उठाना क़तई मुनासिब नहीं।

आसफ़उद्दौला—हाँ-हाँ—लेकिन—ख़ैर, जैसा मुनासिब समझो।

मुर्तज़ा—जो इरशाद।

(एक नौकर आता है)

नौकर—बरेली के दीवान व्यास राय हुज़ूर को सलाम कहते हैं।

आसफ़उद्दौला—व्यास राय ! हाज़िर करो।

(नौकर जाता है)

मुर्तज़ा ख़ाँ—आज दो साल से रुहेलों की मालगुज़ारी दिल्ली की सरकार में पहुँचाई नहीं गई। मुझे ऐसा मालूम होता है कि यह दीवान की या तो लापरवाही है या नालायक़ी।

आसफ़उद्दौला—इधर भी मुसीबत है। रुपयों की कमी है, पर चारों तरफ़ से माँग है ! आमदनी से ज़्यादा है मेरा ख़र्च। कोई माँगता है तो मुझसे इनकार करते नहीं बनता।

मुर्तज़ा ख़ाँ—आप जिस लापरवाही के साथ ख़ैरात करते जा रहे हैं, उसमें रुपयों की कमी का होना कोई ताज्जुब की बात नहीं है।

(व्यास राय आता है)

व्यास राय—नवाब आसफ़उद्दौला साहब की जय हो।

आसफ़उद्दौला—क्या ख़बर है, राय साहब ?

व्यास राय—हुज़ूर, दो साल से मालगुज़ारी नहीं भेज सका। अकाल ही इसका प्रधान कारण था, लेकिन अबकी हालत और ख़राब है।

बरार, बरोच और रुहेलखण्ड की रिआया बाग़ी हो गई है और मालगुज़ारी देना बन्द कर दिया है।

मुर्तज़ा ख़ाँ—रिआया बाग़ी क्यों हुई? एक दिन में तो तीन जगह की रिआया बाग़ी नहीं हो सकती? ज़रूर धीरे-धीरे हुई है। अब तक क्या आप ग़फ़लत की नींद सो रहे थे, या तीरथ करने चले गये थे?

व्यास राय—नहीं हुज़ूर, तीर्थ करने का अवकाश ही कहाँ मिला? जब से इस राज का इजारा लिया है, एक न एक मुसीबत लगी रहती है।

आसफ़उद्दौला—मालगुज़ारी देते वक़्त ही आप पर तमाम मुसीबतें टूट पड़ती हैं। रिआया के बाग़ी होने की ख़बर आपने अब तक क्यों नहीं भेजी?

व्यास राय—जी, मुझे बिलकुल पता न लगा था। अभी हाल में सब मालूम हुआ है। फ़ैज़ुल्ला वहाँ पहुँच गया है और वही रियाया को भड़का रहा है। देश के कुली, मज़दूर और किसान सब उसके साथ हैं। उसको गिरफ़्तार करने की बहुत चेष्टा की मगर सफल नहीं हो सका। मैंने यहाँ तक ज़ाहिर करना चाहा कि यह फ़ैज़ुल्ला असली नहीं बल्कि जाली है। जो उसे गिरफ़्तार करा देगा उसे पाँच लाख रुपया इनाम दिया जायगा, मगर फिर भी कुछ नतीजा नहीं निकला। वे कहते हैं, यह फ़ैज़ुल्ला चाहे असली हो या जाली, यही हमारा राजा है; मेरी हुकूमत कोई मानना ही नहीं चाहता।

आसफ़उद्दौला—अब आप क्या चाहते हैं?

व्यास राय—मेरी यही अरज़ी है कि पलटनें भेजकर बाग़ियों को सज़ा दी जाय।

आसफ़उद्दौला—अच्छा, आप जाकर डेरे पर आराम करें, मैं सोच कर अपनी राय ज़ाहिर करूँगा।

व्यास राय—हुज़ूर की दया से ही ज़िन्दा हूँ। स्वर्गीय नवाब साहब ने दोस्त कहकर मेरे साथ हाथ मिलाया था। अहा सोचते रोमांच हो जाता है। दया के अवतार थे। और आप तो हुज़ूर कहावत ही मशहूर हो गई है—"जिसको न दे मौला, उसे दे आसफ़उद्दौला।" दिल्ली के बादशाह को भी किसी ने यह ख़िताब नहीं दिया—सलाम हुज़ूर—आदाब वज़ीर साहब !

(जाता है)

आसफ़उद्दौला—यह एक और आफ़त है। इसके लिए भी मेरी वालदा ही ज़िम्मेदार हैं। उन्होंने ही फ़ैज़ुल्ला को रिहा किया था। इस बग़ावत को दबा देना बहुत ज़रूरी है। आप देर न कीजिए। रुपयों की सख्त ज़रूरत है। औलाद और वालदा में झगड़ा—आप ही से काम ठीक होगा। मेरा जाना मुनासिब नहीं।

(जाता है)

मुर्तज़ा ख़ाँ—सुना है, बेगम के पास बहुत रुपया है। तुम्हारा न जाना ही मुनासिब है। शायद आधे रुपयों को मैं रास्ते से ही हटा सकूँ। ख़ुदा हाफ़िज़ !

(जाता है)

तीसरा दृश्य

फ़ैज़ाबाद—ख़ुर्दमहल

[शुजाउद्दौला की बेगमें और खोजा-नायब]

एक बेगम—हम कोई बात न सुनेंगी। इज्ज़त! किस बात की? दो दिन हो गये; कुछ खाने तक को मिला? या तो हमें खाने को दो; नहीं तो हम बाज़ार लूटेंगी।

खोजा—बेगम साहबा—ज़रा सब्र कीजिए। आप नवाब की बेगमें हैं। इससे नवाब साहब की तौहीन है। नवाब आसफ़उद्दौला ने ख़ुराकी बन्द की है ज़रूर, मगर मैंने उनके पास अरज़ी भेजी है। जितना रुपया ख़र्चे के लिए दिया जाता था, उसका आधा मिलने पर भी, मैं ख़र्च चला लूँगा।

दूसरी बेगम—पेट इज्ज़त नहीं समझता। बच्चे खाने बिना तड़प रहे हैं। जो कुछ ज़ेवरात और बरतन थे—बेच-बाचकर अब तक गुज़र किया। अब एक मुट्ठी आटा ख़रीदने तक का कोई सामान नहीं। इज्ज़त जाय चूल्हे में; चलो हम लोग बाज़ार लूटेंगी।

खोजा—कैसी मुसीबत है। पाँच सौ बेगमें—उनके बच्चे, बिना खाये-पिये कब तक अपने को सँभाल सकते हैं! क्या करूँ!

सब—जो रोकने की कोशिश करेगा, उसका क़त्ल कर देंगी। तोड़ो फाटक—फाटक तोड़ डालो! खाने को देंगे नहीं और कहेंगे इज्ज़त! हमारी इज्ज़त की क़ीमत ही क्या है! नाम की बेगम होने से क्या—हम असल

में बाँदी हैं—हम तो नवाब मरहूम के असबाब में शामिल थीं। उनके इन्तक़ाल के साथ-साथ हमारी इज़्ज़त का भी इन्तक़ाल हो गया।

(एक लड़का आता है)

लड़का—अम्मीजान, इधर आकर देखिए न ? दूकान में कितनी मिठाइयाँ रक्खी हैं। जमादार, ला दो न वहाँ से कुछ। हमें भूख लगी है।

दूसरी बेगम—जो रास्ते से निकलेगा उसी को मारेंगी। मारो मारो—पत्थरों से मारो सब को – देखो न, ये लोग मज़े में खा-खाकर घूम रहे हैं और हम यहाँ सूख रही हैं। मारो—मारो !

तीसरी बेगम—इस नायब को पहले ख़त्म करो। खाने का इन्तज़ाम नहीं कर सकता; बड़ा नायब बना है।

खोजा—बेगम साहबान—सचमुच मुझे मार डालिए। यह तो अब देखा नहीं जाता, मगर काश, मुझे मारने पर भी आपका पेट भरता !

(बाहर)—ख़ुर्द महल की छत पर से पत्थर आ रहे हैं। राही ! होशियार, होशियार !

(बाहर)—दूकानें बन्द करो; दूकानें बन्द करो।

(बाहर)—हट जाओ, हट जाओ; बड़ी बेगम साहबा का तामजाम जा रहा है—"होशियार होशियार, सवारी सरकार"—"होशियार होशियार।"

खोजा—यह क्या बड़ी बेगम साहबा ? आप सब सब्र करें; मैं अभी फाटक खोलकर आता हूँ।

(जाता है)

एक बेगम—मत जाने दे, मत जाने दे, भाग जायगा।

दूसरी बेगम—यह फाटक खुल रहा है। चलो निकल पड़ें।

(बहू बेगम आती हैं)

बहू बेगम—यह क्या माजरा है? यह बरबादी कैसी! मुझे तो कुछ न मालूम था। बहनो, ज़रा सब्र कीजिए, भूलिए नहीं कि आप नवाब की बेगमें हैं। नवाब साहब ने मुहब्बत और चाह से आप लोगों की बराबर ख़ातिर की। अपनी आबरू खोकर नवाब साहब मरहूम की इज़्ज़त पर धब्बा न लगने दें।

एक बेगम—खाये बिना हम मर रही हैं। महीनों हो गये। बच्चे अलग तड़प रहे हैं। हम बाज़ार लूटेंगी।

बहू बेगम—या अल्लाह! नवाब साहब! आपकी दुलारी सैकड़ों बेगमें, जो फूल से ज़्यादा नाज़ुक थीं, उनकी आज यह क्या हालत है! बहिनो, आज से आपकी सारी ज़िम्मेदारी मैं अपने सर लेती हूँ। अब आपको कोई तकलीफ़ न होगी—इसको मैं मद्देनज़र रक्खूँगी। बख़शी, अभी मेरे महल में चलो; मैं ख़त देती हूँ। बाज़ार के तमाम दूकानदारों को कह दो कि खुर्दमहल में जो कुछ भी समान लगे, बिला उज्र दिया जाय—उसकी क़ीमत मैं दूँगी।

दूसरी बेगम—ख़ुदा आपको सलामत रक्खे। आपने हमारी जान और इज़्ज़त बचाई।

सब—बड़ी बेगम साहबा सलामत!

(ख़ून से लथपथ एक बच्चा आता है)

बच्चा - अम्मीजान, अम्मीजान कहाँ हैं ! बहुत चोट आई है—आँखों के सामने अँधेरा हो रहा है।

तीसरी बेगम —बेटा, मेरे लाल, कैसे चोट आई ?

बहू बेगम—(गोद में गिरकर) हाय अल्लाह—कैसे लगी ? पानी लाओ—पानी-पानी—(अपना ओढ़ना फाड़कर पट्टी बाँध देती है)

दूसरी बेगम—यह है पानी।

बच्चा—उफ़् जल रहा है।

बहू बेगम—कैसे चोट आई बेटा ?

बच्चा—मैं फाटक से बाहर जा रहा था, एक खोजे ने पत्थर से मेरा सर फोड़ दिया।

बहू बेगम—बख्शी ! देखो किस जानवर की यह शैतानी है। बद-तमीज़ जानता नहीं कि यह कौन है। नवाब शुजाउद्दौला के साहबज़ादे ! उसको कड़ी सज़ा दी जाय। सुनो, फ़ौरन हकीम साहब को ख़बर करो।

——

चौथा दृश्य

बरेली—दीवान की कोठी

[दीवान सो रहा है। गुजारी आती है]

गुजारी—उठते भी हो या नहीं ? घर में डाका पड़ा है।

व्यास राय—डाका-डाका ! ख़ज़ाने की चाभी ! सिपाही-पहरा ?

गुजारी—ख़ज़ाने की चाभी करते-करते तो कपार में आग लग गई। हल्ला नहीं सुनाई देता—वह बन्दूक की आवाज़ !

व्यास राय—नहीं नहीं, दूर पर हैं। मैं यहाँ का राजा—मेरे यहाँ डाका डालने की हिम्मत कौन करेगा ? शायद सरकारी सिपाही आ पहुँचे हैं ! बाग़ी-बाग़ी—अब चक्खेंगे मज़ा बच्चू ! सरकारी सिपाही सब को कचाकच काटकर कचूमर बना देंगे।

गुजारी—तो तुम थोड़ी सी अफ़ीम खाकर बैठे-बैठे झूमा करो। अरे उठो न; देखो भी क्या हुआ ?

व्यास राय—होगा क्या, सरकारी सिपाहिही बाग़ियों को कचाकच-कचाकच !

(बाहर)—डाका पड़ा है—डाका पड़ा है !

व्यास राय—एं—डाका-डाका !

गुजारी—अब समझो। मैं तो सीढ़ी से होकर कुएँ में जा छिपती हूँ। तुम अपनी चाभी लेकर बैठे रहो।

(प्रस्थान)

व्यास राय—अरी सुनो, सुनो; मुझे अकेला छोड़कर न जाओ ! मैं मरूँगा ! और तुम छिपकर जान बचाओगी ! तुम कहा करती थीं न कि मैं जब मरूँगा तुम सती हो जाओगी ?

(बाहर गुजारी)—वह तो तुम्हारे मरने के बाद, जीते जी तो नहीं। पहले मरो भी, पीछे देखा जायगा।

व्यास राय—ओह ! कलियुग। घोर कलियुग !

(बाहर)—अल्लाहो अकबर, अल्लाहो अकबर—किधर ?

व्यास राय—हाय राम—सचमुच आ गये सिपाही सिपाही !

(जमादार आता है)

जमादार—क्या है ?

व्यास राय—तुम्हारे रहते डाका कैसे पड़ा ?

जमादार—जी हुज़ूर, डाका पड़ा नहीं है, डकैती हुई है।

व्यास राय—क्या कहते हो ?

जमादार—हुज़ूर, बन्दूक़ को उलटा पकड़ना सिखाया है। जो लड़ने आयेंगे उनकी तरफ़ निशाना नहीं। जो हुक्म देंगे, निशाना उनकी तरफ़ होगा। शहर के सब सिपाही, पहरेदार फ़ैज़ुल्ला साहब की तरफ़ हैं— आया आपके मग़ज़ में !

व्यास राय—ओ समझा, विद्रोह, विद्रोह—ठहरो; सरकारी फ़ौज आ रही है तब देखेंगे।

(फ़ैज़ुल्ला और सिपाही आते हैं)

फ़ैज़ुल्ला—बेईमान दीवान ! अपनी बेवफ़ाई का नतीजा अब पाओगे।

व्यास राय—मारो मत बाबा, जान से मत मारो। बहुत डर लगता है हुज़ूर। मारो नहीं। ग़रीब बेचारी राँड़ हो जायगी।

जमादार—पहचान रहे हैं दीवान साहब, ये असली फ़ैज़ुल्ला हैं या नक़ली ! यही हमारे असल नवाब हैं।

व्यास राय—हाँ बाबा, ज़रूर असली हैं और सब नक़ली! दुहाई है बाबा, मारो मत!

फ़ैज़ुल्ला—मालख़ाने की चाभी कहाँ है?

व्यास राय—देता हूँ बाबा, चाभी, काग़ज़-पत्तर सब ठीक है। हुक्म का नौकर हूँ। शुजाउद्दौला ने जब हुक्म दिया, उसको दिया। आप हुकम दे रहे हैं, आपको देता हूँ। नौकरी की यही झकमारी है—दुहाई है बाबा, जान से मत मारो।

फ़ैज़ुल्ला—कायर को बाँधकर ले आओ—किसी को क़त्ल न करो।

(जाता है—सब जाते हैं)

——

पाँचवाँ दृश्य

उजड़ा हुआ गाँव

[एक तरफ़ ख़ीमा—दूसरी तरफ़ हुए शिरों के लिए कटे स्तम्भ]

[आसफ़उद्दौला और हैदर]

आसफ़उद्दौला—मुसीबत पर मुसीबत! सआदतअली मुर्तज़ा को मारकर भाग गया है। इधर बरार-बरोच-बरेली चारों तरफ़ से बग़ावत! यह सिर्फ़ वालदा के लिए। सिर्फ़ उन्हीं का ख़याल कर मैं सआदत को कड़ी सज़ा नहीं दे सका।

हैदर—यहाँ के बाग़ियों को काफ़ी सज़ा दे दी गई है। बेवक़ूफ़ रियाआ ने दीवान को मारकर सोचा था फ़ैज़ुल्ला को मसनद पर

बिठायेंगे। बदनसीबों को सरों का खम्भा देखकर समझने दो कि बग़ावत का नतीजा क्या है ?

आसफ़उद्दौला—अगर दिल्ली से मदद न आती तो कामयाबी हासिल करना आसान न होता। मगर फिर भी यह नजरा कितना ख़ौफ़नाक है !

हैदर बेग—बरार और बरोच में एक भी जवान मर्द ज़िन्दा नहीं है। ख़ाली हाथ तोपों के सामने कीड़े-मकोड़ों की तरह आकर सब मर गये। मगर सुना है कि बरार की औरतें भी लड़ने का सामान कर रही हैं।

आसफ़उद्दौला—हाँ, अब यही बाक़ी है, ज़नानी फ़ौज।

हैदर बेग—गाँवों के सामने नाके पड़े हैं। बाज़ार बन्द हैं। के रोज़ भूखे रहेंगे ? आख़िर उन्हें फ़ैज़ुल्ला को हमारे हाथ सौंपना ही पड़ेगा।

(फ़ैज़ुल्ला आता है)

फ़ैज़ुल्ला—फ़ैज़ुल्ला को आपके हाथ सौंप देने लायक़ नमकहराम मुझे एक भी न मिला इसी लिए ख़ुद गिरफ़्तार होने के लिए हाज़िर हुआ हूँ। मुझे क़ैद करो चाहे क़त्ल करो—जिससे तुम्हारे ज़ुल्म और बरबादी का यहीं ख़ात्मा हो जाय। अब यह शैतानी ज़ुल्म देखा नहीं जाता।

हैदर—सचमुच फ़ैज़ल्ला ही तो है—हुज़ूर हुक्म !

आसफ़उद्दौला—अभी क़ैद करो उसके बाद सज़ा........।

हैदर—पहरेदार !

(पहरेदार आता है)

हैदर—गिरफ़्तार करो।

पहरेदार—जो हुक्म !

आसफ़उद्दौला—फ़ैज़ुल्ला, देखा अपने किये का नतीजा ! बेवक़ूफ़ भोली रिआया से बग़ावत कराने का आज यह नतीजा है ! कटे हुए सरों का यह खम्भा तुम्हारी कार्रवाइयों की शहादत है। अपने मौत के पहले अच्छी तरह देख लो—जिससे क़ब्र के नीचे भी इसकी याद आये। हैदर बेग, दो सिपाहियों को बुलाओ। एक साथ गोली मारकर इसका ख़ातमा करें।

फ़ैज़ुल्ला—मेरी भी यही ख़्वाहिश थी, जनाब ! जिन्नत के धोखे में मैंने दूसरी औरत पर गोली चलाई थी; उसके बाप और भाई मेरे लिए तुम्हारी गोली का शिकार बने। मेरा भी ख़ातमा गोली से कर दो। अब मैं अमन से सोऊँ !

(एक सिपाही आता है)

सिपाही—हज़ारों औरतें ख़ीमे के बाहर जमा हुई हैं।

आसफ़उद्दौला—औरतें ! क्या चाहती हैं ?

सिपाही—या तो फ़ैज़ुल्ला की रिहाई या अपने लिए मौत !

आसफ़उद्दौला—उनकी दरख़्वास्त पीछे सुनूँगा। पहले फ़ैज़ुल्ला को ख़त्म करो।

(दो सिपाही मारने के लिए बन्दूकें उठाते हैं। सफ़ेद बुरक़े से ढकी हुई एक औरत निशाने के सामने आकर खड़ी होती है।)

औरत—बिला मुझे मारे मजाल नहीं कि फ़ैज़ुल्ला मारा जाय।

आसफ़उद्दौला—कौन है यह औरत ?

बहू बेगम—आसफ़, पहचाना ?

आसफ़उद्दौला—आदाब, अम्माजान, आप ! यहाँ !

बहू बेगम—अम्माजान कहते शर्म न आई ! तुम्हारे ही हुक्म से मुर्तज़ा ख़ाँ ने मेरा महल लूट लिया—मुझे रास्ते की भिखारिन बनाया। जिस छाती पर तुम्हें सुलाकर एक रोज़ मैंने बिहिश्त की ख़ुशी हासिल की थी, जिस छाती पर सुलाकर तुम्हें मैंने ज़िन्दगी का ख़्वाब देखा था, अपनी वालदा की उस छाती पर तुमने कितनी सख़्त चोट पहुँचाई है—काश तुम जानते ?

आसफ़उद्दौला—मगर अम्माजान, मैंने तो मुर्तज़ा से यह नहीं कहा था कि वह आपके ख़ादिम पर हाथ उठाये या आपका सारा महल लूट ले। मैंने सिर्फ़ उसे इतना ही हुक्म दिया था कि मुल्लाओं का फ़तवा दिखाकर ख़ज़ाने पर दख़ल करे। अब देख रहा हूँ कि सआदतअली ने उसे मुनासिब सज़ा दी है।

बहू बेगम—सआदतअली ने मेरे पेट की औलाद न होने पर भी औलाद का काम किया और तुमने मेरी औलाद होकर भी मेरी तौहीन की। ख़ैर, नवाब साहब ! इस वक़्त मैं दौड़ी आई हूँ आपके पास एक भिखारिन की हैसियत से। सुना है, ख़ैरात में आपने नाम हासिल किया है। मैं भी ख़ैरात माँगने आई हूँ। क्या वह ख़ैरात मुझे आप देंगे ? वालदा को नहीं—एक मँगनी को।

आसफ़उद्दौला—वालदा साहबा, यह आप क्या फ़रमा रही हैं—हुक्म दीजिए। ख़ादिम हाज़िर है।

बहू बेगम—फ़ैज़ुल्ला की जान और आज़ादी !

आसफ़उद्दौला—परन्तु अम्मीजान, यह बाग़ी है !

बहू बेगम—बाग़ी यह नहीं, बाग़ी तुम हो।

आसफ़उद्दौला—मैं और बाग़ी !

बहू बेगम—हाँ, तुम बाग़ी !

आसफ़उद्दौला—जिसने मेरे दीवान का क़त्ल किया, मेरे ख़िलाफ़ बग़ावत फैलाई, क्या उसको सज़ा देने का हक़ मुझे नहीं !

बहू बेगम—वे सैकड़ों जली हुई झोपड़ियाँ, वह लाशों से लदा हुआ मैदान—बाहर हज़ारों बेवाओं की दर्दभरी आवाज़ ! ऊपर ख़ुदा—सामने तुम्हारी वालदा ! अपनी छाती पर हाथ रखकर कहो कि क्या नादिरशाही हुकूमत इससे ज़्यादा बदतर थी ? रिआया जानवर नहीं। रिआया को जानवरों की सज़ा नहीं दी जाती। आसफ़, आसफ़ ! अपनी हुकूमत की तलवार नीची करो।

हैदर—(स्वगत) सब बरबाद हो गया ! कमज़ोर-दिल नवाब अपनी वालदा की बातों से ज़रूर पिघल जायगा। (प्रकट) बेगम साहबा, गुस्ताख़ी माफ़ हो। आपकी जगह परदे में है। आबरू बचा-कर चलना आपका फ़र्ज़ है।

आसफ़उद्दौला—हाँ अम्मीजान, आप अपने महल को वापस तशरीफ़ ले जायँ। मैं आपके हुक्म के मुताबिक़ फ़ैज़ुल्ला को रिहा करता हूँ, लेकिन सिर्फ़ शर्त यही है कि तीन रोज़ के अन्दर वह मेरी सल्तनत की सरहद के बाहर चला जाय।

बहू बेगम—वही होगा। तुम्हारी अपनी सल्तनत की सरहद में, जो तुमने अपने वालिद मरहूम से हासिल की है, फ़ैज़ुल्ला न रहेगा। लेकिन मैंने अपने वालिद साहब मरहूम से एक छोटी सी जागीर हासिल की है, जिसका नाम रामपुर है। वह मैं फ़ैज़ुल्ला को देती हूँ। क्या उम्मीद करूँ कि इसमें तुम उज्र न करोगे ?

आसफ़उद्दौला—आपका हुक्म सर-आँखों पर है। मुझे कोई उज्र नहीं, अगर फ़ैज़ुल्ला मुझसे सुलह कर ले कि वह दोस्त बनकर रहेगा। फ़ैज़ुल्ला भाई, तुम आज़ाद हो।

फ़ैज़ुल्ला—यह आज़ादी मौत से बदतर है। मगर अम्मीजान दो दफ़ा आपने मेरी जान बचाई, मैं आपका ऐहसानमन्द ग़ुलाम हूँ। आप सिर्फ़ आसफ़उद्दौला की वालदा नहीं—मेरी भी वालदा हैं। सिर्फ़ यही अपना हक़ समझकर, मैं वादा करता हूँ कि आज से आसफ़उद्दौला के साथ मेरी कोई दुश्मनी नहीं।

बहू बेगम—आमीन्—और आसफ़उद्दौला, तुम्हारी क़ैद में और-और जो बदनसीब हैं उनका ?

हैदर—वे सब किसान हैं।

बहू बेगम—उनको छोटा न समझिए हैदरअली साहब। किसान ? किसान ही सल्तनत की जान है ! आसफ़उद्दौला, अगर तुम अपनी सल्तनत को एक मज़बूत पाये पर खड़ी रखना चाहो तो उन ग़रीब किसानों के साथ हमेशा हमदर्दी का बरताव करना, उनकी हर तरह इमदाद करना। इन्सान इन्हीं ग़रीब ठुकराये जानेवाले किसानों की मेहनत से पैदा फ़सल

को खाकर ही जी रहे हैं। बड़े-बड़े काम कर रहे हैं।—उनको हमेशा अपना समझना।

आसफ़उद्दौला—जो इरशाद! हैदर! सब क़ैदियों को रिहा कर दो। जिनके घर जल गये हैं, उनके घर बनवा दो। जिनके पास फ़सल नहीं, ख़ज़ाने से उनकी इमदाद करो। हर एक किसान के घर जाकर उसकी फ़रियाद सुनो और उसका माक़ूल इन्तज़ाम करो। चलिए अम्मीजान, आज वालदा का हाथ पकड़कर नासमझ औलाद घर लौटेगी।

बहू बेगम—आसफ़, मुझे आज फ़ख़ है कि मैं तुम्हारी वालदा हूँ। लेकिन अब घर नहीं। मैं काबे की तरफ़ रवाना होने के लिए तैयार होकर निकली हूँ। लेकिन एक काम और बाक़ी रह गया है। तुम्हारे वालिद साहब मरहूम ने एक शख़्स पर ज़ुल्म किया था। ज़रा उसकी तलाश करूँगी—अपने शौहर की तरफ़ से उनसे माफ़ी माँगूँगी! आसफ़, काश तुम जानते मेरे इस दिल में कितना दर्द है!

(दुराब अली आता है)

दुराब अली—हुज़ूर, आपने जिस काम के लिए मुझे भेजा था उसमें मैंने कामयाबी हासिल की है।

बहू बेगम—कामयाबी हासिल की है? ख़ुदा तुम्हें सलामत रक्खे। आसफ़, अब मुझे इजाज़त दो। अल्लाह तुम्हें बरक़रार रक्खे।

फ़ैज़ुल्ला—लेकिन अम्मीजान, मैं आपके साथ चलूँगा।

बहू बेगम—आसफ़, तुम्हारा नाम तवारीख़ में सोने के हरूफ़ में लिखा रहे—यही मेरी दुआ है।

आसफ़उद्दौला—तो क्या आज मैं सचमुच अपनी वालदा से मायूस हुआ !

बहू बेगम—नहीं आसफ़, अब तक तुम वालदा की जिस हमदर्दी से मायूस थे, वह तुम्हें आज वापस मिली।

——

छठा दृश्य

पहाड़ों से घिरा हुआ जङ्गल

[बहार और अज़ीमन]

बहार—भाई, तुम यहाँ अकेले थोड़ी देर खेलते रहो। मैं भीख माँग लाऊँ। धूप में जाने में तुम्हें तकलीफ़ होगी।

अज़ीमन—रोज़ तो हम दोनों जाते हैं—गीत गाकर भीख माँगते हैं। आज आप अकेले क्यों जायँगे ?

बहार—बादशाह के ख़ुफ़िया चारों तरफ़ घूम रहे हैं। कोई शुबहा करेगा तो मुझे अकेला ही पकड़ेगा।

अज़ीमन—भाई जान, ग़फ़ूर भाई आजकल क्यों नहीं आते ?

बहार—आते हैं किसी-किसी रोज़; रात में—छिपकर ! हम यहाँ पर छिपे हैं, कोई शक न करे। इसलिए रात में गाँव से पोशीदा तौर पर आते हैं।

अज़ीमन—पहले तो ग़फ़ूर भाई खाने को देते थे। हमें भीख नहीं माँगनी पड़ती थी। अब वे क्यों नहीं देते ?

बहार—ग़फ़ूर भाई बहुत ग़रीब हैं, हमसे भी ज़्यादा।

अज़ीमन—हमसे भी ज़्यादा ग़रीब कोई नहीं है। जङ्गल में रहते हैं; भीख माँगकर खाते हैं। अच्छा भाई जान, पहाड़ के अन्दर ऐसा घर कहाँ से आया?

बहार—शायद यह किसी फ़क़ीर की गुफा थी।

अज़ीमन—गोया हमारे रहने के लिए ही बनाई गई थी। अगर यह गुफा न मिलती तो क्या होता भाई जान?

बहार—ख़ुदा ताला ज़रूर कोई न कोई इन्तज़ाम करते।

अज़ीमन—अच्छी बात तो यह है कि इधर कोई आता नहीं, नहीं तो हम अब तक पकड़ लिये जाते। अच्छा भाई जान, हमें कोई क्यों पकड़ेगा? हमने तो किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा है?

बहार—यही नवाबी का नतीजा है। बड़ा पेड़ जब गिरता है तब ऐसे ही गिरता है।

अज़ीमन—अच्छा भाई जान, हम कब बड़े होंगे? अब्बाजान और अम्मीजान को तकलीफ़ें तो देखी नहीं जातीं।

बहार—अब्बाजान की तबियत ज़रा और सुधर जाने पर हम लोग नेपाल चलेंगे। वहाँ हमें छिपकर रहना नहीं पड़ेगा। वहाँ हम सिपाही होंगे, लड़ाई करना सीखेंगे। फिर बड़े होने पर हम दोनों बहादुर भाई बङ्गाले में लौटकर उनसे बदला लेंगे, जिनके सबब आज हमारी यह हालत है।

अज़ीमन—बड़े कब होंगे? क्या ख़ुदा हमको दो रोज़ में बड़ा नहीं कर सकता?

बहार—वक़्त ज़्यादा हो रहा है। तुम ज़रा छिपकर रहो। मैं भीख माँग लाऊँ। शाम के पहले ही लौट आऊँगा।

अज़ीमन—आप जाइए। मेरे लिए फ़िक्र न कीजिए। इधर तो कोई शेर के डर से आता भी नहीं और मैं उस शेर की खाल ओढ़े घूमूँगा। कोई पहचान नहीं सकेगा। अच्छा, हम दोनों उस गाने को तो कम से कम एक साथ गा लें। उसके बाद आप चले जाइएगा।

(दोनों गाते हैं)

एक पैसा, पावभर आटा, दे ख़ुदा की राह पर,
अल्लाह तुझको बेटा देवे, दे ख़ुदा की राह पर।
ऐ अमीरो, हम ग़रीबों की तरफ़ देखो ज़रा,
अल्लाह तुझको दौलत देवे, दे ख़ुदा की राह पर।
भूखे वालिद वालदा मजबूर हैं, बीमार हैं,
एक पैसा, पावभर आटा, दे ख़ुदा की राह पर।
अल्लाह तुझको चैन देवे, दे ख़ुदा की राह पर।

अज़ीमन—अच्छा भाई जान, आप तशरीफ़ ले जाइए। मैं रोज़ जैसे सब जानवरों को डराया करता हूँ, उसी तरह डराऊँ।

(जाता है)

बहार—मेरा भोला भाई! इन तकलीफ़ों को बरदाश्त कर रहा है—मगर हर वक़्त हँसता हुआ। कभी कहता नहीं कि "मुझसे अब नहीं सहा जाता।" वालिद साहब का दिमाग़ ख़राब हो गया है—कभी अम्मीजान को मारने जाते हैं, कभी बच्चे की तरह बैठकर रोते हैं।

अज़ीमन चुपचाप आँखें फाड़कर देखता रहता है। रोता भी नहीं—और रोये भी कहाँ से? आँसू आँखों में ही सूख गये। जाऊँ, खुदा मेरे भाई को देखना।

(प्रस्थान)

(एक शेर का बच्चा आता है। एक पत्थर से खेलते-खेलते, किसी के पैर की आहट पाकर छिप जाता है। एक शिकारी आकर गोली मार देता है—करुणापूर्ण स्वर सुनाई देता है।)

शिकारी—आदमी की आवाज़! एक लड़के को सवेरे इधर देखा था न। लेकिन मेरी गोली से ऐसा निशाना नहीं चूकता।

अज़ीमन—भाई-जा-न!

शिकारी—अरे तब क्या यह शेर नहीं! (जल्दी से जाकर अज़ीमन को पकड़ता है।)

अज़ीमन—भाईजान, साँस नहीं ली जाती, मुँह खोल दीजिए।

शिकारी—(चमड़ा खोल लेता है) यह क्या? एक बच्चा!

अज़ीमन— आप भाईजान नहीं हैं—आपने मुझे क्यों मारा!

शिकारी—ओफ़, मैंने ग़लती से एक बच्चे को मार डाला! अगर किसी ने देख लिया तो मुझे भी ख़त्म कर देगा। मैं भाग जाऊँ, मगर मैं बेक़सूर हूँ। मैंने शेर समझकर ही गोली चलाई थी।

(भाग जाता है)

(वहार आता है)

वहार—जङ्गल में गोली की आवाज़ कैसी ! अज़ीमन की आवाज़ सुनाई दी थी न ? अज़ीमन—अज़ीमन—भाई—वह भाग कौन गया ?

अज़ीमन—भाईजान, भाईजान ! मैं मर रहा हूँ।

वहार—(दौड़कर अज़ीमन को छाती से लगाता है) अज़ीमन, किस दुश्मन ने तुम्हारा यह हाल किया ?

अज़ीमन—रोज़ यह शेर की खाल पहनकर जङ्गल में घूमता हूँ। छोटे-छोटे जानवरों को डराता हूँ। आज एक शिकारी ने गोली मार दी। वह भाग गया।—प्यास—छाती सूख रही है—बड़ी प्यास ! भाई-जान, आपका चेहरा धुँधला मालूम होता है।

वाहर—अज़ीमन, अज़ीमन, हमको छोड़कर चले ! दोनों भाई भिखारी थे। मीर क़ासिम के दो छोटे लड़के—उनमें से एक शिकारी की गोली का निशाना बना। मैं क्यों ज़िन्दा हूँ ! मेरे भाई पर गोली चलाने-वाले मिहरबान ! अगर नज़दीक कहीं हो तो मेहरबानी कर एक गोली मुझे भी मार दो। बड़ी नवाज़िश होगी। दोनों भाई एक साथ भीख माँगते थे, अब एक साथ ही मर जायँगे।

अज़ीमन—भाईजान, अम्मीजान को न देख सका। अब्बाजान को सलाम नहीं कर सका। उनसे मत कहना कि मैं मर गया हूँ। बेचारे रोते रोते मर जायँगे। कहना, मैं खो गया। बड़ी प्यास—प्यास। भाईजान-भाईजान सलाम—ओह !

(मृत्यु)

बहार—अज़ीमन, अज़ीमन ! मेरे प्यारे भाई; किस मुँह से मैं अम्मी-जान के सामने खड़ा हूँगा ? भाई रात को मेरी छाती से लगकर अब और कौन सोयेगा ? आह मेरा भाई !

(उठाकर ले जाता है)

——

सातवाँ दृश्य

पहाड़ की गुफा

[गुलनार और जिन्नतउन्निसा]

गुलनार—बच्चे अभी तक क्यों नहीं लौटे ? इतनी देर तो किसी रोज़ नहीं होती थी ।

जिन्नत—अम्मीजान, अब कितने रोज़ इस तरह यहाँ पड़े रहेंगे ? और मैं भी कब तक तुम्हारे गले पर बोझा बनी रहूँ ? अब तो मैं अच्छी हो गई हूँ । मुझे इजाज़त दीजिए फिर क़िस्मत आज़माकर देखूँ ।

गुलनार—अब तक हम यहाँ से चले जाते । तुम दौड़ती हुई गिर पड़ीं—सख़्त बुख़ार में परेशान हुईं । बुख़ार की हालत में तुम बड़बड़ाया करती थीं, उसी से हमें मालूम हुआ कि तुम कौन हो । हम भिखमंगे हैं हमारे लिए तुमको भी भिखारिन होना पड़ा । ख़ुदा की क़ुदरत में ऐसी मिसालें कम ही मिलेंगी । हमारे बच्चे भीख माँगकर लाते हैं, और उससे हम अपना पेट भरते हैं । ग़फ़ूर भी छिप-छिपाकर कभी कुछ ले आता

है। यह क्यों कह रही हो कि तुम हमारे गले पर बोझा बनी हो ? बोझा नहीं, यह तो तुम्हारी बदनसीबी है और हमारी .खुशक़िस्मती कि थोड़ी सी ख़िदमत भी हम तुम्हारी कर सके हैं।

जिन्नतउन्निसा—नवाब साहब का इरादा नेपाल जाने का था न ? वहाँ तो छिपकर रहना न पड़ेगा। हम वहाँ कब चलेंगी ?

अब तक तो चले जाते, मगर नवाब साहब की तबियत एकाएक ख़राब हो गई। कभी तो बिलकुल अच्छे रहते हैं, फिर कभी-कभी बिलकुल दीवाने की तरह।

जिन्नतउन्निसा—ग़फ़ूर भाई भी कई रोज़ से नहीं आये। नवाब साहब का एक शाल बेचने के लिए ले गये थे न ?

गुलनार—शायद अभी तक बेच नहीं सके। फिर, आना भी तो बहुत होशियारी से पड़ता है। बादशाह का हुक्म है कि जो उनको गिरफ़्तार करा देगा, उसे लाख रुपया इनाम मिलेगा।

जिन्नतउन्निसा—अच्छा शाम हो गई—पानी भर लाऊँ।

(जाती है)

गुलनार—शाम हो गई—ज़िन्दगी की शाम कब होगी ?

(बाहर मीर क़ासिम का ग़फ़ूर अली, ग़फ़ूर अली कहकर चिल्लाना)

गुलनार—नवाब साहब उठ बैठे। आज फिर तबियत कुछ बेठिकाने मालूम होती है। या .खुदा मेरे शौहर को चङ्गा कर।

(मीर क़ासिम आता है)

मीर क़ासिम—तुम कौन हो ? ग़फ़ूर कहाँ है ?

गुलनार—ग़फ़ूर नहीं आया है।

मीर क़ासिम—तुम कौन हो?

गुलनार—ज़रा इतमीनान रखिए। ऐसा क्यों कर रहे हैं?

मीर क़ासिम—नवाबी मसनद! धोखा देकर लेगा? किसकी मजाल है! बेईमानी से मीर जाफ़र ने बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा की सूबेदारी हासिल की थी। मैं उसका दामाद था। अगर मैंने भी बेईमानी से उसका वह हक़ छीन लिया तो गुनाह कौन सा किया? यह तो मेरा हक़ था! बेईमान के साथ बेईमानी की थी—ईमानदार के साथ नहीं। उस हक़ से तुम मुझे मायूस करोगे? तुम? मैं तुम्हें क़त्ल करूँगा।

गुलनार—ऐसा ही कीजिए—मुझे भी आराम मिले।

मीर क़ासिम—रोती हो? आँसुओं से मेरे दिल को पिघला नहीं सकोगी। नहीं! मैंने भी रोते-रोते बङ्गाल की सरहद को छोड़ा था। बेईमान मेरे उन आँसुओं को देखकर हँसे थे। इसी लिए मेरे इस सर की क़ीमत लाख रुपये है। आँसुओं से अब मैं न पिघलूँगा। मैं तो जाऊँगा ही—लेकिन जाने के पेश्तर बेईमानों के क़ुनबे में किसी को जीता नहीं रख जाऊँगा। तुम मीर जाफ़र की लड़की हो—तुम्हें पहले क़त्ल करूँगा!

(बालों को पकड़कर मारना चाहता है)

गुलनार—मुझे एकदम मार डालो। मुझसे यह देखा नहीं जाता।

मीर क़ासिम—ऐं! यह मैं क्या कर रहा हूँ! तुम्हारे जिस्म पर मैंने ज़ालिम हाथों को लगाया है। मैं—मैं—बदक़िस्मत मीर क़ासिम!—नहीं-नहीं—ग़फ़ूर अली—ग़फ़ूर अली—ग़फ़ूर अली कहाँ है? मुझको

बाँधकर रक्खो। हाथों में हथकड़ियाँ जकड़ दो नहीं तो कहीं बीवी और बच्चों को न मार डालूँ।

गुलनार—आप ऐसा क्यों करते हैं ?

मीर क़ासिम—मालूम नहीं, एक जिन् आता है, मैं उसे रोक नहीं पाता। एक काला—बड़ा—जिन् मेरे कानों में कहता है—सब को मार डाल; ख़ून की नदी बहा दे। बङ्गाले की मिट्टी ख़ून से लाल हो गई—पलासी का मैदान लाल हो गया। नवाबी मसनद ख़ून की नदी के ऊपर बह रही है। यहाँ बाक़ी क्यों रहे—बेईमानों की जड़ ख़त्म कर दो।

गुलनार—बच्चे तुम्हारी ऐसी हालत देख कर डरते रहते हैं। मुझे बरदाश्त हो गया है। मुझे चाहे मार डालो, काट डालो, परवा नहीं। मगर उन बेचारों के मुँह की तरफ़ देखकर तो कम से कम अपने को सँभालने की कोशिश करो।

मीर क़ासिम—कोशिश तो करता हूँ; दिन-रात अपने साथ लड़ता हूँ। ऐसी लड़ाई बङ्गाले में नहीं लड़ी, रोहतासगढ़ में नहीं लड़ी, बक्सर में नहीं लड़ी। मगर क्या करूँ! हार जाता हूँ। तुमसे मेरी अर्ज़ है—तुम मुझे माफ़ करो। मेरे लिए तुमने बहुत कुछ बरदाश्त किया है। तुम नवाबज़ादी हो, नवाब की बेगम हो। तुम्हारी असमत् और वफ़ादारी की जोड़ नहीं—मेरी एक गुज़ारिश है—

गुलनार—फ़रमाइए।

मीर क़ासिम—एक रस्सी से मुझे बाँधकर रक्खो—हाथों और पैरों में बेड़ियाँ डाल दो जिससे कभी तुम्हारे ऊपर हाथ न उठा सकूँ। मेरा मन क़ाबू के बाहर है।

गुलनार—आप से अर्ज़ करती हूं—ऐसा हुक्म मुझे न दें। मेरी ही बदनसीबी से आपका यह हाल है।

मीर क़ासिम—मगर फिर क्या किया जाय? नहीं तो बीबी-बच्चों का किसी रोज़ सचमुच क़त्ल न कर डालूँ। आह! वही तुम--वही मैं! तुम मेरी प्यारी बेगम गुलनार! आज भिखारिन से भी बदतर तुम्हारी हालत! नवाबी के नशे में पागल होकर, यह मैंने क्या किया—क्या किया! अब भी कहता हूं, मेरे हाथ बाँध दो—हाथ बाँध दो! मीर जाफ़र! बेईमान, मीर जाफ़र! वह देख सिराजुद्दौला का कटा हुआ सर ज़मीन पर लुढ़क रहा है। और हाथी की पीठ पर बँधी हुई सिराजुद्दौला की लाश। नहीं-नहीं, मैंने बेईमानी नहीं की! तुम कहो न? तुम कहो न? तुम गवाह हो—बोलती क्यों नहीं? बोलती क्यों नहीं? ओह! मीर जाफ़र की लड़की हो तुम—इसी लिए—बदज़ात—तुम्हें क़त्ल करने पर भी मेरा ग़ुस्सा ठण्डा नहीं होगा। (अपना हाथ आप ही पकड़कर) कोई मेरे इन दोनों हाथों को काट ले सकता है? यह क्या हुआ? गुलनार, तुम भाग जाओ, तुम भाग जाओ। नहीं तो कहीं तुम्हारा ख़ून न कर डालूँ!

(बाहर) बहार—अम्मीजान, अम्मीजान! भाई अज़ीमन हम लोगों को छोड़ गया।

(बहार अज़ीमन की लाश लेकर आता है)

गुलनार—ऐं! यह क्या? अज़ीमन-अज़ीमन! या अल्लाह भिखारिन के जिगर के टुकड़ों को न छीनो!

मीर क़ासिम—ऐं यह क्या हुआ है ! रोती क्यों हो ? रोती क्यों हो ! ज़रा समझा दो। ज़मीन पर वह कौन पड़ा है !

बहार—अब्बाजान, अज़ीमन दुनिया से चला गया।

गुलनार—क्या आपकी समझ में नहीं आ रहा है ? मेरा अज़ीमन—ख़ुदा ख़ुदा !

मीर क़ासिम—अज़ीमन—अज़ीमन— मर गया ! नवाब मीर क़ासिम का नवाबज़ादा अज़ीमन ! क़ासिमअली—उसका वालिद कहाँ है ! बङ्गाल, बिहार, उड़ीसा का नवाब मीर क़ासिम कहाँ है ?

बहार—अब्बाजान, ज़रा तो ख़ामोश रहिए। क्यों भूल रहे हैं कि आप ख़ुद नवाब मीर क़ासिम हैं।

मीर क़ासिम—मैं नवाब मीर क़ासिम हूँ ? क्या सच है ? ऐं क्या यह सच है ? और तू मेरा बहार है और ज़मीन पर जो लेटा है वह मेरा अज़ीमन है ? अज़ीमन— अज़ीमन ! उठो बेटा—ज़मीन पर क्यों लेटे हो बेटा ?

बहार—अम्मीजान, एक शिकारी ने शेर के धोखे में मेरे भाई को गोली मार दी।

गुलनार—अल्लाह, बदनसीब गुलनार को तू इसके साथ ही उठा ले —ख़ुदा !

(छाती पीटती है)

मीर क़ासिम—अज़ीमन—अज़ीमन !

गुलनार—किसको बुला रहे हैं आप ? अब वह हमारी आवाज़ न सुनेगा। अब मुझे अम्मीजान कहकर न बुलायेगा। अज़ीमन भाग गया। या रहीम !

मीर क़ासिम—भाग गया ? भाग गया ? बचा है। कितनी दूर भागेगा—चिल्लाकर बुलाऊँगा। इतने ज़ोर से आवाज़ दूँगा कि वह आवाज़ सख्त पत्थर के पहाड़ों के दिल को तोड़ती हुई आसमान से टकराकर फिर ज़मीन पर लौट आयेगी। क्या वह आवाज़ उसके कान तक न पहुँचेगी ? पहुँचेगी, ज़रूर पहुँचेगी और वह दौड़कर वापस चला आयगा। मैं उसका अब्बा हूँ, क्या वह मेरी बात न सुनेगा ? अज़ीमन ! अज़ीमन ! यह क्या—यह तो मौत है ? गुलनार, क्या सचमुच अज़ीमन मर गया ? मेरा अज़ीमन ? मेरा अज़ीमन ? भिखारी नवाब मीर क़ासिम का लड़का अज़ीमन ! ओ हो हो हो ! हाँ, सब याद आया। तब तो मैं दीवाना नहीं हूँ ? मगर आँसू क्यों नहीं आते—रुलाई क्यों नहीं लगती ? दिल के अन्दर तूफ़ान मचा है—सर फट रहा है। (अपना सर पीटता है।) एक तसवीर के बाद दूसरी तसवीर नज़रों के सामने से गुज़र रही है। ख़ुदा ! ख़ुदा ! क्या यही नवाबी का आख़िरी नतीजा है ?

(बहू बेगम, ग़फ़ूर अली, दुराब अली और फ़ैज़ुल्ला आते हैं)

बहू बेगम—नवाब साहब, आदाब। देखिए आज आपके दौलतख़ाने में हम मेहमान हैं।

मीर क़ासिम—कौन हैं ये ? क्या बिहिश्त से हूरें और फ़िरिश्ते मेरे अज़ीमन को वापस लेकर आये हैं ? आयेंगे नहीं ! आयेंगे नहीं ! नवाब मीर क़ासिम के दिल का टुकड़ा, उसको धोखा देकर कहीं जा

सकता है? गुलनार, गुलनार! अब मत रोओ। देखो बिहिश्त से अल्लाह ताला ने हूरों और फ़िरिश्तों की मारफ़त अज़ीमन की रूह वापस भेजी है।

बहू बेगम—यह क्या दर्दनाक नज़ारा है! ग़फ़ूर, क्या यही दिखलाने के लिए लाये हो! गुलनार! बहन! या अल्लाह!

गुलनार—अब यह मुँह न दिखाऊँगी, न दिखाऊँगी; मेरा जिगर का चाँद, अज़ीमन अब नहीं है, अब यह मुँह मैं न दिखाऊँगी!

ग़फ़ूर अली—अम्मीजान, कुछ समझ में नहीं आ रहा है कि यह क्या माजरा है? यह कैसे हुआ? अज़ीमन क़ज़ा कर गया, नवाब साहब! हुज़ूर!

मीर क़ासिम—किसने बुलाया!

ग़फ़ूर अली—आपका ग़ुलाम ग़फ़ूर।

मीर क़ासिम—ग़फ़ूर? हाँ, सच ग़फ़ूर ही तो है! तो मैं सचमुच मीर क़ासिम ही हूँ? और ये—इनको तो कभी देखा नहीं!

ग़फ़ूरअली—फ़ैज़ाबाद की बेगम।

मीर क़ासिम—शुजाउद्दौला की बेगम!

बहू बेगम—हाँ, नवाब साहब! मैं वही बदनसीब हूँ। काबे की तरफ़ पैर बढ़ाया था, लेकिन दिल में ख्वाहिश थी कि किसी क़दर आपसे मिलकर अपने शौहर मरहूम के गुनाहों की माफ़ी माँगूँगी। मरने के पहले दिन-रात उनकी ज़ुबाँ पछतावे के साथ यही कहती रही कि "मीर क़ासिम के गरम आँसू मेरे दिल को जला रहे हैं। उसके आँसू मुझे एक चुल्लू में कोई ला दो—मैं उन्हीं से माफ़ी माँगूँगा।" लेकिन यहाँ

आकर जो देख रही हूँ उससे यही मालूम होता है कि मुझे और मेरे बदनसीब शौहर मरहूम को माफ़ करना अल्लाह को मंज़ूर नहीं।

फ़ैज़ुल्ला—आह ! ख़ुदा तुझे यही दिन दिखाना था !

मीर क़ासिम—हाँ, मैं सब को पहचान रहा हूँ। आपकी बातें मैंने सुनी हैं; आप सचमुच बिहिश्त की हूर हैं ! तुम फ़ैज़ुल्ला मेरे पनाह देनेवाले मालिक बिहिश्त के भटके हुए फिरिश्ता हो। मैं बदनसीब मीर क़ासिम ! मेरी बीबी गुलनार रो रही है—अज़ीमन मर गया है। और तुम क़ासिम अली के ख़ादिम नहीं, वालिद हो !

(जिन्नत आती है)

जिन्नतउन्निसा—हैं, यह क्या हुआ ? अम्मीजान, अल्लाह !

गुलनार—बेटी, तेरा प्यारा भाई क़ज़ा कर गया। मेरी गोद सूनी हो गई, आह—परवरदिगार !

फ़ैज़ुल्ला—ऐं जिन्नत, यहाँ ?

मीर क़ासिम—जिन्नत ! हाफ़िज़ साहब की पोती। भिखारी मीर क़ासिम के दो लड़के थे—और रास्ते में उसे मिली एक दुख़्तर। एक लड़का धोखा देकर चला गया ! फ़ैज़ुल्ला, अभी भी मैं क़िस्मतवाला हूँ ! इस पहाड़ की गुफा में भीख की रोटियाँ तोड़कर मेरी बेटी और तुम्हारी दिलबर जिन्नत अभी तक ज़िन्दा है। लो, अब तुम सँभालो अपनी चीज़ को। और बड़ी बेगम साहबा—आपने क्या चाही—माफ़ी—माफ़ी। अगर मेरे माफ़ करने से आपके शौहर मरहूम की रूह पनाह पाये तो मैं अपने इस प्यारे बेटे की लाश की क़सम खाकर

कहता हूँ कि सिर्फ़ आपके शौहर को ही नहीं बल्कि जिस किसी ने मेरे साथ बेवफ़ाई की है, मैंने अपने दिल से सब को माफ़ किया। बदले में तुम सब मुझे माफ़ करना! तुम .फै.जुल्ला, तुम ग़फ़ूर, तुम गुलनार! मैंने .खुद जलते-जलते सबको जलाया है—मुझे माफ़ करना! बहार! मेरी ज़िन्दगी की बहार! अगर ज़िन्दा रहो तो कभी नवाबी की ख्वाहिश न करना। सिर्फ़ एक इन्सान बनने की कोशिश करना! ग़फ़ूर! मुझे पकड़ो—पकड़ो। दिल घबरा रहा है। मेरी छाती को .खूब दाबकर पकड़ो—और ज़ोर से—और ज़ोर से। छाती की एक तरफ़ है बहार, दूसरी तरफ़ था अज़ीमन। बिलकुल ख़ाली हो गई वह जगह। पकड़ो—पकड़ो!

गुलनार—हाय अल्लाह, यह मेरे नसीब में क्या बदा है!

.फै.जुल्ला—नवाब साहब! नवाब साहब!

बहार—अब्बाजान! अब्बाजान!

मीर क़ासिम—सब अँधेरा होता जा रहा है। ओफ़! सबको सलाम—सलाम—अल्लाह!

(मृत्यु)

ग़.फ़ूर—आह! ख़त्म—रहम—'या रहीम!'

गुलनार—क्या एक ही दिन में बच्चे के साथ मैंने अपने शौहर को भी खोया? हाय .खुदा! मुझे आप साथ लेते चलिए।

बहार—अब्बाजान! अब्बाजान!

बहू बेगम—उठो बहन, बहार को छाती पर उठा लो। दुराबअली—

अब काबे को नहीं जायँगे। आज से गुलनार की ख़िदमत करना ही मेरा सब से आला दीन और फ़र्ज़ है। बेवा गुलनार और यतीम बहार यही मेरी छाती के टुकड़े हैं। इनके आँसुओं को पोंछने में ही मेरी बाक़ी ज़िन्दगी बसर होगी। ग़फ़ूर—वफ़ादार फ़क़ीर! भिखारी नवाब मीर क़ासिम को हैसियत दफ़नाने का इन्तज़ाम करो। फ़ैज़ुल्ला, तुम्हें अपनी नेकी के बदले जिन्नत मिल गई! दुराब अली, अब महल को न लौटूँगी—इसी जङ्गल में झोंपड़ी बनाकर जब तक जीती रहूँगी, बहन गुलनार की बग़ल में बैठकर, आँसुओं से अपने शौहर मरहूम के गुनाहों की माफ़ी ख़ुदा से माँगूँगी। यही मेरा हज है—यही मेरा दीन और यही मेरा फ़र्ज़ है।

— —